प्रस्तावना.

परोपकारी महात्माओना लेखोनी महत्वता अपूर्व होय छे. तेना लोको थवानो आधार तेना ग्राहकना अधिकार उपर रहे छे, एवा अपूर्व लेखोनुं रहस्य आदर पूर्वक अभ्यासथीज प्रगट थाय छे; अने तेनुं आदर पूर्वक श्रवण पठन अने मनन करवाथीज अंते ते फलदायी नीवडे छे.

पवित्र जैन दर्शन जणावे छे के आ जगतमां अनादि कालथीज मिथात्व छे. जे मानवाने आपणने प्रत्यक्ष आदि कारणो मोजुद छे, आवा मिथ्यात्वना कारणरुप अज्ञानरुपी अंधकारनो नाश करवा परम उपकारी पूज्यपाद गुरु श्री विजयानंदसूरी (आत्मारामजी)ए आ जैनधर्म विषयीक प्रश्नोत्तर नामनो ग्रंथ रच्यो छे, आ अने आ सिवायना बीजा आ महात्माए बनावेला ग्रंथो प्रथमथीज प्रशंसनीय थता आवेला छे.

आ हित धर्मनो जे भावना तेमना मगजमां जन्म पामेली ते लेख रुपे बाहार आवतांज आखो दुनीयाना पंडीतो—ज्ञानीओ धर्म गुरुओ—

लेखको अने सामान्य लोको उपर जे असर करे छे तेज तेनी उपयोगिता दर्शाववाने बस छे.

जैनधर्म अनादि कालथीज छे, अने ते बौद्धधर्मथी तदन अलग अने पेहेलाथीज छे, ते तेमज जैनमतना पुस्तकोनी उत्पत्ति—कर्मनुं स्वरूप—जीनप्रतिमानी पूजा करवानो तीर्थंकरोए करेलो उपदेश विगेरे बीजी केटलीक उपयोगी बाबतोनो आ ग्रंथमां समावेश करेला छे.

वर्तमान कालमां व्यवहारिक केलवणी लीधेला युवको जेने जैनधर्मनुं तत्व शुं छे तेनाथी अजाण छे तेउने तेमज अन्य धर्मीउने आ ग्रंथ आद्यंत वांचवाथी जैनधर्मनुं टुटु टुटु स्वरुप केटलेक अंशे मालम पडे तेम छे.

कोइपण निष्पक्षपाती तत्व जीज्ञासु पुरुष आ ग्रंथनुं स्वरुप आद्यंत अवलोकशे तो एक जैनना महान् विद्वाने भारतवर्षनी जैन प्रजा उपर आवा उत्तम ग्रंथो रची मदद् उपकार कीधो छे. ते साथे आ विद्वान सिरोमणी महाशय पुरुष

सांप्रत काले विद्यमान नथी तेने माटे अतुल खेद प्राप्त थशे.

हेवटे अमारे आनंद सहित जणाववुं पडे छे के मरहुम पूज्यपादना हृदयमां अनगार धर्मनी साथे परोपकारपणानी पवित्र छाया जे पडी हती ते छाया तेमना परिवार मंडलना हृदयमां उतरी छे. पोताना गुरुनुं यथाशक्ति अनुकरण करवाने ते शिष्य वर्ग त्रिकरण शुद्धिथी प्रवर्त्ते छे तेनी साथे विद्या, ऐक्यता स्वार्पण अने परोपकार बुद्धि तेमना शिष्य वर्गमां प्रत्यक्ष मूर्तिमान जोवामां आवे छे अने तेउ परम सात्विक होइ सर्वने ते-वांज देखे छे अने तेवांज करवा इछे छे अने ते-उनुं जीवन गुरु भक्तिमय छे आवा केटलाक गु-णोने लइने आवा महान् ग्रंथोने प्रसिद्धीमां लावी जैन समुहमां मूकी जैनधर्मनुं अजवालु पाडवा आ ग्रंथनी आवृती करवानो समय आव्यो छे जो के आ ग्रंथनी प्रथम आवृती आजथी अढार वर्ष उपर संवत १९४५ नी सालमां मरहुम गुरुराज नी समत्तीथी राजेश्री गीरधरलाल हीराभाई

पालणपुर दरबारी न्यायाधीशे बाहार पाम्ही हती, परंतु तेनी एक नकल हालमां नहीं मलवाथी ते पूज्यपाद गुरुराजना परिवार मंम्लनी आज्ञानुसार तेनी आ बीजी आवृत्ती अमोए बाहार पाम्लीछे.

आवा उपयोगी महान ग्रंथ अमारी सन्ना तरफथी बहार पम्हे तेमां अमोने मोटुं मान छे जेथी ते बाबतमां अमोने आज्ञा आपनार ए महान गुरुराजना परिवार मंम्लनो अमो उपकार मानवो आ स्थले जूली जता नथी.

छेवटे आ ग्रंथनो प्रथम आवृती प्रकट करावनार राजेश्री गोरधनलाल हीराजाइए अमारी सन्ना तरफथी बीजी आवृती प्रकट करवानी आपेल मान जरेलो परवानगी माटे तेउनो पण उपकार मानीए छीए,

आ ग्रंथ छपावतांना दरम्यान कच्छ मोटी खाखरना रेहेनार शेठ रणसीजाइ तेमज रवजी जाइ तथा नेणसीजाइ देवराजे तेनी सारी संख्यामां कोपीउ लेवानो इच्छा जणाववाथी आवा ज्ञान खाताना कार्यना उत्तजनार्थे आ तेउए क-

रेली मदद माटे अमो तेओने धन्यवाद आपीए छीये अने तेमां शेठ रवजीभाइ देवराजे खरीदेल बुको तमाम पोते पोता तरफथी वगर कीमते आपवाना होवाथी तेमना आवा स्तुती भरेला कार्यने माटे अमोने वधारे आनंद थाय छे.

ग्रंथनी शुद्धता अने निर्दोषता करवानी सावधानी राखवा छतां कदी कोइ स्थले दृष्टी दोषथी के प्रमादथी भूल थयेली मालम पडे तो सुज्ञ पुरुषो सुधारी वांचशो अने अमोने लखी जणावशो तो तेओनो उपकार मानीशुं.

संवत १९६३ ना फागण सुद ५ रविवार देहीरोह.

श्री जैन आत्मानंद सभा.
भावनगर.

—#०+०#

अर्पणपत्रिका.

सद्गुण संपन्न स्वधर्म प्रेमी गुरुभक्त
सुज्ञ शेठ श्री रणशीभाई देवराज
मु. मोटी खाखर.
(कच्छ).

आप एक उदार अने श्रीमान जैन गृहस्थ छो जैनधर्म प्रत्येनो तेमज मुनि महाराजाओ प्रत्येनो आपनो अवर्णनीय प्रेम, श्रद्धा, अने लागणी प्रसंशनीय छे. जैनधर्मना ज्ञाननो वहोलो फेलावो थाय तेवा यत्न करवामां आप प्रयत्नशील छो, अने तेवा उत्तम कार्यना नमुनारुपे आपे आ ग्रंथ छपाववामां योग्य मदद आपी छे तेमज अमारी आ सभा उपर अत्यंत प्रीति धरावो छो. विगेरे कारणोथी आ ग्रंथ अमे आपने अर्पण करवानी रजा लइए छीए.

प्रसिद्धकर्त्ता.

जैन प्रश्नोत्तर.

अनुक्रमणिका.

॥ श्री अर्हं नमः ॥

श्री जैन धर्म विषयिक प्रश्नोत्तर.

प्रश्न–जिन और जिनशासन इन दोनो शब्दोंका अर्थ क्याहै.

उत्तर–जो राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ काम अज्ञान रति अरति शोक हास्य जुगुप्सा अर्थात् घिणा मिथ्यात्व इत्यादि भाव शत्रुयोंकों जीते तिसकों जिन कहते है यह जिन शब्दका अर्थहै. ऐसे पूर्वोक्त जिनकी जो शिक्षा अर्थात् उत्सर्गापवादरूप मार्गद्वारा हितकी प्राप्ति अहितका परिहार अंगीकार और त्याग करना तिसका नाम जिनशासन कहतेहै. तात्पर्य यहहैकि जिनके कहे प्रमाण चलना यह जिनशासन शब्दका अर्थहै अभिधान चिंतामणि और अनुयोगद्वार वृत्यादिमेंहै.

प्र. २–जिनशासनका सार क्याहै.

उ.–जिनशासन और द्वादशांग यह एकहीके दो नामहै इस वास्ते द्वादशांगका सार आचारंगहै और आचारंगका सार तिसके अर्थका यथार्थ जानना तिस जाननेका सार तिस अर्थका यथार्थ परकों उपदेश करना तिस उपदेशका सार यहकि चारित्र अंगीकार करना अर्थात् प्राणिवध १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन ६ इनका त्याग करना इसकों चारित्र कहतेहै अथवा चरणसत्तरीके ७० सत्तर भेद और करण सत्तरिके ७० सत्तर भेद ये एकसौ चालीस १४० भेद मूल गुण उत्तर गुणरूप अंगीकार करे तिसकों चारित्र कहते है तिस चारित्रका सार निर्व्वाणहै अर्थात् सर्व कर्मजन्य उपाधिरूप अग्निसें रहित शीतलीभूत होना तिसका नाम निर्व्वाण कहतेहै तिस निर्व्वाणका सार अव्याबाध अर्थात् शारीरिक और मानसिक पीड़ा रहित सदा सिद्ध मुक्त स्वरूपमे रहना यह पूर्वोक्त सर्व जिनशासनका सारहै यह कथन श्री आचारंगकी निर्युक्तिमेहै.

प. ३—तीर्थंकर कौन होते है और किस जगे होतेहै और किस कालमें होतेहै.

उ.—जे जीव तीर्थंकर होनेके नवसें तीसरें नवमें पहिलें वीस स्थानक अर्थात् वीस धर्मके कृत्य करे तिन कृत्योंसे बमा नारी तीर्थंकर नामकर्म रूप पुन्य निकाचित उपार्जन करें तब तहांसे काल करके प्रायें स्वर्ग देवलोकमें उत्पन्न होतेहै तहांसें काल कर मनुष्य क्षेत्रमें बहुत नारी रिद्धि परिवारवाले उत्तम शुद्ध राज्यकुलमें उत्पन्न होतेहै जेकर पूर्व जन्ममें निकाचित पुन्यसें नोग्य कर्म उपार्जन करा होवे तबतो तिस नोग्य कर्मानुसार राज्य नोगविलास मनोहर नोगतेहै, नही नोग्यकर्म उपार्जन करा होवे तब राज्यनोग नही करतेहै. इन तीर्थंकर होनेवाले जीवांको माताके गर्नमेंही तीन ज्ञान अर्थात् मति श्रुति अवधी अवश्यमेवही होते है, दीक्षाका समय तीर्थंकरके जीव अपने ज्ञानसेंही जान लेतेहै जेकर माता पिता विद्यमान होवें तबतो तिनकी लेके जेकर माता पिता विद्यमान नही होवें

अपने भाइ आदि कुटंबकी आज्ञा लेके दीक्षा लें- नेके एक वर्ष पहिले लोकांतिक देवते आकर क- हते है हे भगवान्! धर्म तीर्थ प्रवर्त्तावो. तद पीछे एक वर्ष पर्यंत तीनसौ क्रोटि अठयास्सी करोम असीलाख इतनी सोने मोहरें दान देके वमे म- होत्सवसें दीक्षा स्वयमेव लेतेहै किसीकों गुरु नही करतेहै क्योंकि वेतो आपही त्रैलोक्यके गुरु होनेवालेहै और ज्ञानवंतहै तद पीछे सर्व पापके त्यागी होके महा अद्भुत तप करके घाती कर्म चार क्षय करके केवली होतेहै. तद पीछे संसार तारक उपदेश देकर धर्म तीर्थके करनेवाले ऐसे पुरुष तीर्थंकर होतेहै. उपर कहे हुए वीस-धर्म कृत्यें का स्वरूप संक्षेपसे नीचे लिखतेहै. अरिहंत १ सिद्ध २ प्रवचन संघ ३ गुरु आचार्य ४ स्थविर ५ व- हुश्रुत ६ तपस्वी ७ इन सातों पदोंका वात्सल्य अनुराग करनेसें इन सातोंके यथावस्थित गुण उत्कीर्तन अनुरूप उपचार करनेसें तीर्थंकर नाम- कर्म जीव बांधताहै इन पूर्वोक्त सातों अर्हंतादि पदोंका अपने ज्ञानमें वार वार निरंतर स्वरूप

चिंतन करे तो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे ८ दर्शन सम्यक्त ए विनय ज्ञानादि विषये १० इन दोनोकों निरतिचार पालेतो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे. जो जो संयमके अवश्य करने योग्य व्यापारहै तिसकों आवश्यक कहतेहै तिसमें अतिचार न लगावे तो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे ११ मूल गुण पांच महाव्रतमें और उत्तर गुण पिंड विशुद्ध्यादिक ये दोनो निरतिचार पाले तो तीर्थंकर नाम कर्म बांधे १२ क्षण लव मूहुर्त्तादि कालमें संवेग भावना शुभ ध्यान करनेसें तीर्थंकर नाम कर्म बांधताहै १३ उपवासादि तप करनेसें यति साधु जनकों उचित दान देनेसें तीर्थंकर नाम कर्म बांधताहै १४ दश प्रकारकी वैयावृत्य करनेसें ती० १५ गुरुआदिकांकों तिनके कार्य करणेसे गुरु आदिकोंके चित्त स्वास्थ रूप समाधि उपजावनेसें ती० १६ अपूर्व अर्थात् नवा नवा ज्ञान पढनेसें ती० १७ श्रुत भक्ति प्रवचन विषये प्रभावना करनेसें ती० १८ शास्त्रका बहुमान करनेसें ती० १९ यथाशक्ति अर्हदुपदिष्ट मार्गकी देशनादि क-

रके शासनकी प्रभावना करे तो तीर्थंकर नाम कर्म बांधेहै २० कोई जीव इन वीसों कृत्योंमे चाहो कोइ एक कृत्यसें तीर्थंकर नाम कर्म बांधे है. कोइ दो कृत्योंसे कोइ तीनसे एवं यावत् कोइएक जीव वीस कृत्योंसें बांधेहै यह उपरका कथन ज्ञाता धर्मकथा १ कल्पसूत्र २ आवस्यकादि शास्त्रोंमे है. और तीर्थंकर पांच महाविदेह पांच भरत पांच ऐरवत इन पंदरां क्षेत्रोमें उत्पन्न होते है और इस भरतखंडमें आर्य देश साढे पच्चीसमे उत्पन्न होतेहै वे देश २५॥ साढे पचवीस ऐसेहै.

उत्तर तर्फ हिमालय पर्वत और दक्षिण तर्फ विंध्याचल पर्वत और पूर्व पश्चिम समुद्रांत तक इसकों आर्यावर्त्त कहते है इसके वीचही साढे-पंचवीश देशहै तिनमें तीर्थंकर उत्पन्न होतेहै यह कथन अभिधान चिंतामणि तथा पन्नवणाआदि शास्त्रोंमेहै. अवसर्पिणि कालके ६ आरे अर्थात् ६ हिस्से है तिनमे तीसरे चौथे विभागमे तीर्थंकर उत्पन्न होतेहै और उत्सर्पिणि कालके ६ विभागोमेंसें तीसरे चोथे विभागमे उत्पन्न होतेहै.

यह कथन जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति आदि शास्त्रोंमेंहै.

प्र. ४–तीर्थंकर क्या करतेहै और तीर्थंकरोंके गुणाका वरनन करो.

उ.–तीर्थंकर भगवंत वदलेके उपकारकी इच्छा रहित राजा रंक ब्राह्मण और चंडाल प्रमुख सर्व जातिके योग्य पुरुषांकों एकांत हितकारक संसार समुद्रकी तारक धर्मदेशना करतेहै और तीर्थंकर भगवंतके गुणतो इंद्रादिभी सर्व वरनन नही करसक्तेहै तो फर मेरे अल्प बुद्धीवालेकी तो क्या शक्तिहै तोभी संक्षेपसें भव्यजीवांके जानने वास्ते थोडासा वरनन करतेहै. अनंत केवल ज्ञान १ अनंत केवल दर्शन २ अनंत चारित्र ३ अनंत तप ४ अनंत वीर्य ५ अनंत पांच लब्धि ६ क्षमा ७ निर्लोभता ८ सरलता ९ निरभिमानता १० लाघवता ११ सत्य १२ संयम १३ निरिच्छकता १४ ब्रह्मचर्य १५ दया १६ परोपकारता १७ राग द्वेष रहित १८ शत्रु मित्रभाव रहित १९ कनक पथर इन दोनो ऊपर सम भाव २० स्त्री और तृण ऊपर समभाव २१ मांसाहार रहित २२ मदिरा-

पान रहित २३ अनक्ष्य नक्षण रहित २४ अगम्य गमन रहित २५ करुणा समुद्र २६ सूर २७ वीर २८ धीर २ए अक्षोन्य ३० परनिंदा रहित ३१ अपनी स्तुति न करे ३२ जो कोइ तिनके साथ विरोध करे तिसकोंनी तारनेकी इछावाले ३३ इत्यादि अनंत गुण तीर्थंकर नगवंतोमेंहै सो कोइन्नी शक्तिमान नहीहै जो सर्व गुण कह सके और लिख सके.

प्र. ए–जैन मतमें जे क्षेत्र महाविदेहादिकहै तहां इहांका कोइ मनुष्य जा सक्ताहै कि नही.

उ.–नही जा सकताहै क्योंकी रस्तेमें वर्फ पाणी जम गयाहै और वमे वमे ऊंचे पर्वत रस्तेमेंहै वमी वमी नदीयां और उजाम जंगल रस्तेमेंहै अन्य बहुत विघ्नहै इस वास्ते नही जासक्ताहै.

प्र. ६–नरत क्षेत्र कोनसाहै और कितना लांबा चौमाहै.

उ.–जिसमें हम रहेतेहै यही नरतखंमहै इसकी चौमाइ दक्षिणसे उत्तर तक ५२६० किंचित् अधिक उत्सेधांगुलके हिसाबसें कोस होतेहै

और वैताढ्य प्रवर्तके पास लंबाइ कुछक अधिक ए0000 नवे हजार उत्सेधांगुलके हिसावसें कोस होतेहै चीन रूसादि देश सर्व जैन मतवाले जर-तखंमके बीचही मानतेहै यह कथन अनुयोगद्वा-रकी चूर्णि तथा अंगुल सत्तरी ग्रंथानुसारहै कित-नेक आचार्य जरतखंमका प्रमाण अन्यतरेंके योजनोंसें मानतेहै परं अनुयोगद्वारकी चूर्णि कर्त्ता श्री जिनदासगणि क्षमाश्रमणजी तिनके मतकों सिद्धांतका मत नही कहतेहै.

प्र. ७–जरत क्षेत्रमे आजके कालसें पहिला कितने तीर्थंकर हूएहै.

उ.–इस अवसर्पिणि कालमें आज पहिलां चोवीस तीर्थंकर हूएहै जेकर समुच्चय अतीत का-लका प्रश्न पूछतेहो तव तो अनंत तीर्थंकर इस जरत खंममे होगएहै.

प्र. ८–इस अवसर्पिणि कालमे इस जर-तखंममें चोवीस तीर्थंकर हूएहै तिनके नाम कहो.

उ.–प्रथम श्री रुषजदेव १ श्री अजीत-नाथ २ श्री संजवनाथ ३ श्री अजिनंदननाथ ४

श्री सुमतिस्वामी ५ श्री पद्मप्रन्न ६ सुपार्श्वनाथ ७ श्री चंद्रप्रन्न ८ श्रो सुविधिनाथ पुष्पदंत ए श्री शीतलनाथ१० श्री श्रेयांसनाथ११ श्रीवासुपूज्य१२ श्रीविमलनाथ१३ श्री अनंतनाथ १४ श्री धर्मनाथ १५ श्रीशांतिनाथ१६ श्री कुंथुनाथ१७ श्रीअरनाथ १८ श्री मल्लिनाथ १ए श्रो मुनिसुव्रतस्वामी २० श्रोनमिनाथ२१ श्री अरिष्टनेमि२२ श्री पार्श्वनाथ २३ श्रीवर्द्धमानस्वामी महावोरजी २४ ये नामहैं.

प्र. ए–इन चौवीस तीर्थंकरोंके माता पिताके नाम क्या क्याथे.

ज.–नान्नि कुलकर पिता श्रीमरूदेवी माता १ जितशत्रु पिता विजय माता २ जितारि पिता सेना माता ३ संवर पिता सिद्धार्था माता ४ मेघ पिता मंगला माता ५ धर पिता सुसीमा माता ६ प्रतिष्ट पिता पृथ्वी माता ७ महसेन पिता लक्ष्मणा माता ८ सुग्रीव पिता रामा माता ए दृढरथ पिता नंदामाता १० विश्नु पिता विश्नुश्रो माता ११ वसुपूज्य पिता जया माता १२ कृतवर्मा पिता श्यामा माता १३ सिंहसेन पिता सु·

यशा माता १४ भानु पिता सुव्रता माता १५ विश्वसेन पिता अचिरा माता १६ सूर पिता श्री माता १७ सुदर्शन पिता देवी माता १८ कुंभ पिता प्रभावति माता १९ सुमित्र पिता पद्मावति माता २० विजयसेन पिता वप्रा माता २१ समुद्रविजय पिता शिवा माता २२ अश्वसेन पिता वामा माता २३ सिद्धार्थ पिता त्रिशला माता २४ ये चौवीस तीर्थंकरोके क्रमसें माता पिताके नाम जान लेने चोवीसही तीर्थंकरोके पिता राजेथे. वीसमा २० और वावीसमा ये दोनो हरिवंश कुलमे उत्पन्न हुएथे और गौतम गोत्री थे शेष २२ वावीस तीर्थंकर ईक्षाकुवंशमें उत्पन्न हुएथे और काश्यप गोत्री थे.

प्र. १०–श्री ऋषभदेवजीसें पहिलां इस भरतखंडमे जैन धर्म था के नही.

उ.–श्री ऋषभदेवजीसे पहिलां इस अवसर्पिणि कालमें इस भरतखंडमे जैनधर्मादि कोइ मतकाभी धर्म नहीथा इस कथनमें जैन शास्त्रही प्रमाणहै.

प्र. ११–जेसा धर्म श्रीऋषभदेवस्वामीने चलायाथा तैसाही आज पर्यंत चलाआताहै वा कुछ फेरफार तिसमें हूआहै.

उ.–श्रीऋषन्नदेवजोने जैसा धर्म चलायाथा तैसाही श्री महावीर न्नगवंते धर्म चलाया इसमें किंचित्मात्रन्नी फरक नहीहै सोइ धर्म आजकाल जैन मतमें चलताहै.

प्र.–१२–श्री महावीरस्वामी किस जगें जन्मेथे और तिनके जन्म हुआंको आज पर्यंत १९४५ संवत तक कितने वर्ष हुएहे.

उ.–श्रीमाहावीरस्वामी क्षत्रियकुंम्ग्राम नगरमें उत्पन्न हुएथे और आज संवत १९४५ तक २४८७ वर्षके लगन्नग हुएहै विक्रमसें ५४२ वर्ष पहिले चैत्र शुदि १३ मंगलवारकी रात्रि और उत्तराफाल्गुनि नक्षत्रके प्रथम पादमें जन्म हुआथा.

प्र.१३–क्षत्रियकुंम्ग्राम नगर किस जगेंथा.

उ.–पूर्व देशमें सूबेविहार अर्थात् वहार तिसके पास कुंमलपुरके निजदीक अर्थात् पासहीथा.

प्र. १४–महावीर न्नगवंत देवानंदा ब्राह्म-

णीकी कूखमें किस वास्ते उत्पन्न हूये.

उ.–श्रीमहावीर भगवंतके जीवने मरीचीके भवमें अपने ऊंच गोत्र कुलका मद अर्थात् अभिमान कराथा तिस्सें नीच गोत्र बांध्याथा सो नीच गोत्रकर्म बहुत भवोंमें भोगना पडा तिसमेंसें थोमासा नीच गोत्र भोगना रह गयाथा तिसके प्रभावसें देवानंदाकी कूखमें उत्पन्न हुए उर नीच गोत्र भोगा.

प्र. १५–तो फेर जेकर हम लोक अपनी जात उर कुलका मद करे तो अछा फल होवेगा के नही, मद करना अछाहै के नही.

उ.–जेकर कोइभी जीव जातिका १ कुलका २ बलका ३ रूपका ४ तपका ५ ज्ञानका ६ लाभका ७ अपनी ठकुराइका ८ ये आठ प्रकारका मद करेगा सो जीव घणे भवां तक ये पूर्वोक्त आठहो वस्तु अछी नही पावेगा अर्थात् आठोंही वस्तु नीच तुछ मिलेंगा इस वास्ते बुद्धिमान पुरुषकों पूर्वोक्त आठहो वस्तुका मद करना अछा नहीहै.

प्र. १६–जितने मनुष्य जैनधर्म पालते होवे तिन सर्व मनुष्योंको अपने न्नाइ समान मानना चाहियेके नही. जेकर न्नाइ समान मानेतो तिनके साथ खाने पीनेकी कुछ अरुचलहै के नही.

उ. जितने मनुष्य जैन धर्म पालते होवे तिन सर्वके साथ अपने न्नाइ करतांन्नी अधिक पियार करना चाहिये. यह कथन श्राद्ध दिनकृत्य ग्रंथमेंहै और तिनोकी जातीयां जेकर लोक व्यवहार अस्पृश्य न होवें तदा तिनके साथ खाने पीनेकी जैन शास्त्रानुसार कुछ अरुचल मालुम नही होतीहै क्योंकि जब श्रीमहावीरजीसें ७० वर्ष पीछे और श्रीपार्श्वनाथजीके पीछे छठे पाट श्रीरत्नप्रन्नसूरिजीनें जब मारवाडके श्रीमाल नगरसें जिस नगरीका नाम अब न्निल्लमाल कहेतेंह तिस नगरसें किसी कारणसें न्नीमसेन राजेका पुत्र श्रीपुंज तिसका पुत्र उत्पलकुमर तिसका मंत्री ऊहड ए दोनो जणे १८ हजार कुटंब सहित निकलके योधपुर जिस जगेहै तिससें वीस कोसके लगन्नग उत्तर दिशिमे लाखों आदमीयोकी

वस्ती रूप उपकेशपट्टन नामक नगर वसाया, तिस नगरमें, सवालक्ष आदमीयांकों रत्नप्रभसूरिने श्रावक धर्ममे स्थाप्या तिस समय तिनके अगारह गोत्र स्थापन करे तिनके नाम तातहड़ गोत्र १ वापणा गोत्र २ कर्णाट गोत्र ३ वलहरा गोत्र ४ मोराक्ष गोत्र ५ कुलहट गोत्र ६ विरहट गोत्र ७ श्री श्रीमाल गोत्र ८ श्रेष्ठि गोत्र ए सुचिंती गोत्र १० आइचणाग गोत्र ११ भूरि गोत्र भटेवरा १२ भाद्र गोत्र १३ चीचट गोत्र १४ कुंभट गोत्र १५ डिंडु गोत्र १६ कनोज गोत्र १७ लघुश्रेष्टी १८ येह अगारही जैनी होनेसे परस्पर पुत्र पुत्रीका विवाह करने लगे और परस्पर खाने पीने लगे इनमेसें कितने गोत्रांवाले रजपूतथे और कितने ब्राह्मण और वनियेभी थे इस वास्ते जेकर जैन शास्त्रसें यह काम विरुद्ध होता तो आचार्य महाराज श्रीरत्नप्रभसूरिजी इन सर्वकों एकठे न करते. इसी रीतीसें पीछे पोरवाड़ उसवालादि वंश थापन करे गये है, अन्य कोइ अरूचलतो.

परंतु इस कालके वैश्य लोक अपने समान

दूसरी जातिवालेको नही समझतेहै यह अमचलहै

प्र. १७–जैन धर्म नही पालता होय तिसके साथ तो खाने पीने आदिकका व्यवहार न करे परंतु जो जैन धर्म पालता होवे तिसके साथ उक्त व्यवहार होसके के नही.

उ.–यह व्यवहार करना न करना तो वणिये लोकोंके आधीनहै· और हमारा अभिप्राय तो हम ऊपरके प्रश्नोत्तरमें लिख आएहै.

प्र. १८–जैन धर्म पालने वालोंमें अलग अलग जाती देखनेमें आतीहै ये जैन शास्त्रानुसार हैं के अन्यथाहै और ए जातियों किस वखतमे हूइहै.

उ.–जैन धर्म पालने वाली जातियों शास्त्रानुसारे नही बनीहै, परंतु किसी गाम, नगर पुरुष धंधेके अनुसारे प्रचलित हूइ मालम पडती है. श्रीमाल उसवालकातो संवत् उपर लिख आयेहै और पोरवाड वंश श्रीहरिभद्रसूरिजीने मेवाड देशमें स्थापन करा और तिनका विक्रम संवत् स्वर्गवास होनेका ५८५ का ग्रंथोमे लिखाहै

और जैपुरके पास खंडेला गामहै तहां वीरात् ६४३ मे वर्षे जिनसेनआचार्यने ८२ गाम रजपूतोंकें और दो गाम सोनारोके एवं सर्व गाम ८४ जैनी करे तिनके चौरासी गोत्र स्थापन करे सो सर्व खंडेलवाल वनिये जिनकों जैपुरादिक देशोंमें सरावगी कहतेहै. और संवत् विक्रम २१७ मे हंसारसें दश कोशके फासलेपर अग्रोहा नामक नगरका ऊजड टेकरा वडा जारीहै तिस अग्रोहे नगरमें विक्रम संवत् २१७ के लगभग राजा अग्रके पुत्रांको और नगरवासी कितनेही हजार लोकांकों लोहाचार्यने जैनी करा, नगर ऊजड हूआ. पीछे राजभ्रष्ट होनेसें और व्यापार वणिज करनेसें अग्रवाल वनिये कहलाये. इसी तरे इस कालकी जैनधर्म पालने वाली सर्व जातियां श्री महावीरसे ७० वर्ष पीछेसें लेके विक्रम संवत् १५७५साल तक जैन जातियां आचार्योंने वनाइहै तिनसें पहिलां चारोंही वर्ण जैन धर्म पालते थे इस समयेकी जातियां नहीथी इस प्रश्नोत्तरमें जो लेख मैंने लिखाहै सो वहुत ग्रंथोमें मैने ऐसा लेख वां-

चाहे परंतु मैंने अपनी मनकल्पनासे नही लिखाहै.

प्र. १९–पूर्वोक्त जातीयोंमेंसें एक जाती-वाले दूसरी जाति वालोंसें अपनी जातिकों उत्तम मानतेहै और जाति गर्व करतेहै तिनकों क्या फल होवेगा.

उ.–जो अपनी जातिकों उत्तम मानतेहै यह केवल अज्ञानसें रूढी चली हूइ मालम होती है क्योंके परस्पर विवाह पुत्र पुत्रीका करनां और एक न्याणेंमें एकठे जीमणां और फेर अपने आ-पकों ऊंचा माननां यह अज्ञानता नहीतो दूसरी क्याहै. और जातिका गर्व करनैवाले जन्मांतरमें नीचजाति पावेंगे यह फल होवेगा.

प्र. २०–सर्व जैन धर्म पालनवालीयों वैश्य जातियां एकठी मिल जावें और जात न्यात नाम निकल जावे तो इस काममें जैनशास्त्रकी कुछ मनाइहै वा नही.

उ.–जैन शास्त्रमेंतो जिस कामके करनेसें धर्ममें दूपण लगें सो बातकी मनाइहै. शेपतो लो-कोनें अपनी अपनी रूढीयों मान रखीहै उपरले

प्रश्नोमें जब नसवाल बनाएथे तब अनेक जातियोकी एक जाति बनाइथी इस वास्ते अबन्नी कोइ सामर्थ पुरुष सर्व जातियोंको एकठो करे तो क्या विरोधहै.

प्र. २१—देवानंदा ब्राह्मणीकी कूखथी त्रिशला क्षत्रियाणीकी कूखमें श्रीमहावीरस्वामीकों किसने और किसतरेंसें हरण किना.

न—प्रथम देवलोकके इंद्रकी आज्ञासें तिसके सेवक हरिनगमेषी देवतानें संहरण कीना तिसका कारण यहहैकि कदाचित् नीच गोत्रके प्रन्नावसें तीर्थकर होने वाला जीव नीच कुलमें नत्पन्न होवे परंतु तिस कुलमें जन्म नही होताहै इस वास्तै अनादि लोक स्थीतीके नियमोसें इंद्र सेवक देवतासें यह काम करवाताहै.

प्र. २२—अपनी शक्तिसें महावीरस्वामी त्रिशलाकीं कूखमें क्यों न गये.

न.—जन्म, मरण, गर्नमें नत्पन्न होनां यह सर्व कर्मके अधीनहै. निकाचित् अवश्य न्नोगे विना जेन दूर होवे ऐसे कर्मके नदयमे किसीकोन्नी

शक्ति नही चल सक्तिहै. और जो लोक ईश्वरावतार देहधारीकों सर्वशक्तिमान् मानतेहै सो निकेवल अपने माने ईश्वरकी महत्वता जनाने वास्ते. जेकर पक्षपात छोडके विचारीये तो जो चाहेसो कर सके ऐसा कोइभी ब्रह्मा, शिव, हरि, क्रायस वगेरे मानुष्योमे नही हूआहै. इनोंके कर्त्तव्योंकी इनका पुस्तकें वांचीये तब यथार्थ सर्व शक्ति विकल मालुम होजावेंगे. इस कारणसें सर्व जीव अपने करे कर्माधीनहै इस हेतुसे श्रीमहावीरस्वामी अपनी शक्तिसें त्रिशला माताकी कूखमें नही जासकेहै.

प्र. २३—महावीरस्वामीके कितने नामथे.

उ.—वीर १ चरमतीर्थंकृत २ महावीर ३ वर्द्धमान ४ देवार्य ५ ज्ञातनंदन ६ येह नामहै १ वीर वहुत सूत्रोंमें नामहै १ चरमतीर्थंकृत कल्पादि सूत्रें २ महावीर ३ वर्द्धमान यहतो प्रसिद्धहै वहुत शास्त्रोंमे देवार्य, आवश्यकमें ज्ञातनंदन, ज्ञातपुत्र, आचारंग दशाश्रुतस्कंधे ६ यहाँ एकठे हेमाचार्यकृत् अभिधानचिंतामणि नाममालामेहै.

प्र. २४—श्रीमहावीरस्वामीका वमा न्नाइ और तिनकी वहिनका क्या क्या नामथा.

उ.—श्री महावीरस्वामीके वमे न्नाइका नाम नंदिवर्द्धन और वहिनका नाम सुदर्शना था.

प्र. २५— श्रीमहावीरके उपर तिनके माता पिताका अत्यंत रागथा के नही.

उ.—श्रीमहावीरके उपर तिनके माता पिताका अत्यंत राग था क्योंकि कल्पसूत्रमें लिखा है कि श्रीमहावीरजीने गर्न्नमे ऐसा विचार कराके हलने चलनेसें मेरी माता डुख पावेहै. इस वास्ते अपने शरीरकों गर्न्नमेही हलाना चलाना वंध करा. तव त्रिशला माताने गर्न्नके न चलनेसें मनमें ऐसें मानाके मेरा गर्न्न चलता हलता नहीहै इस वास्ते गल गया है, तवतो त्रिसला माताने खान, पान, स्नान, राग, रंग, सव गेमके वहुत आर्त्त ध्यान करना शुरु करा, तव सर्व राज्यन्नवन शोक व्याप्त हुआ. राजा सिद्धार्थन्नी शोकवंत हुआ. तव श्रीमहावीरजीने अवधिज्ञानसें यह देखा तव विचार कराके गर्न्नमे रहे ।

पिताका इतना बमा न्नारी स्नेहहै तो जब मैं इनकी रूबरु दीक्षा लेऊंगा तो मेरे माता पिता अवश्य मेरे वियोगसें मर जाएगे, तब श्रीमहावीरजीने गर्न्नमेही यह निश्चय कराकि माता पिताके जीवते हुए मैं दीक्षा नही लेवुंगा.

प्र. २६—इन श्रीमहावीरजीका वर्द्धमान नाम किस वास्ते रखा गया.

उ.—जब श्रीमहावीरजी गर्न्नमें आये तबसें सिद्धार्थराजाकी सतांग राज्य लक्ष्मी वृद्धिमान् हुइ, तब माता पिताने विचाराके यह हमारे सर्व वस्तुकी वृद्धि गर्न्नके प्रन्नावसें हुइहै. इस वास्ते इस पुत्रका नाम हम वर्द्धमान रखेंगे; न्नगवंतके जन्म पीछे सर्व न्यात वंशीयोकी रूबरु पुत्रका नाम वर्द्धमान रक्का.

प्र. २७—इनका महावीर नाम किसनें दीना.

उ. परीषह और उपसर्गसें इनकों न्नारी मरणांत कष्ट तक हुए तोन्नी किंचित मात्र अपना धीर्य और प्रतिज्ञासें नही चलायमान हुए हैं, इस वास्ते इंद्र, शक्र और न्नक्त देवतायोंने

श्रीमहावीर नाम दीना. यह नाम बहुत प्रसिद्धहै.

प्र. २८–श्रीमहावीरकी स्त्रीका नाम क्या था और वह स्त्री किसकी बेटीथी.

उ.–श्रीमाहावीरकी स्त्रीका नाम यशोदा था, और सिद्धार्थ राजाका सामंत समरवीरकी पुत्री थी जिसका कौण्डिन्य गोत्र था.

प्र. २९–श्रीमहावीरजीने यशोदा स्त्रीके साथ अन्य राज्य कुमारोंकी तरे महिलोंमें भोग विलास कराथा.

उ.–श्री महावीरजीके भोग विलासकी सामग्री महिल बागादि सर्वथी. परंतु महावीरजी तो जन्मसेंही संसारिक भोग विलासोंसे वैराग्यवान् निस्पृह रहते थे; और यशोदा परणी सोभी माता पिताके आग्रहसें और किंचित् पूर्व जन्मोपार्जित भोग्य कर्म निकाचित भोगने वास्ते. अन्यथातो तिनकी भोग्य भोगनेमे रति नही थी.

प्र. ३०–श्रीमहावीरजीके कोइ संतान हुआ था तिसका नाम क्याथा.

उ.–एक पुत्री हुइथी तिसका नाम प्रिय

दर्शना था.

प्र. ३१–श्रीमहावीरस्वामी अपने पिताके घरमें मूलसें त्यागी वा न्नोगी रहेथे.

उ.–श्रीमहावीरजी २८ अठावीस वर्ष तक तो न्नोगी रहे पीछे माता पिता दोनो श्री पार्श्वनाथजी २३ में तीर्थंकरके श्रावक श्राविका थे. वेह महावीरजीकी २८ मे वर्षकी जिंदगीमें स्वर्गवासी हुए पीछे श्री महावीरजीने अपने बडे न्नाइ राजा नंदिवर्द्धनकों दीक्षा लेनें वास्ते पूछा, तव नंदिवर्द्धनने कहाकी अवहीतो मेरे मातापिता मरेहै श्रौर तत्कालही तुम दीक्षा लेनी चाहतेहो यह मेरेकों वमा न्नारी वियोगका डुख होवेगा, इस वास्ते दो वर्ष तक तुम घरमे मेरे कहनेसे रहो, तव महावीरजी दो वरस तक साधुकी तरे त्यागी रहे.

प्र. ३२–महावीरजीका वेटीका किसके साथ विवाह कराथा.

उ.–क्षत्रियकुंमका रहने वाला कौशिक गोत्रिय जमालि नामा क्षत्रिय कुमारके साथ वि-

वाद करा था.

प्र. ३३—श्रीमहावीरजीकों त्यागी होनेका क्या प्रयोजन था.

उ—सर्व तीर्थंकरोका यही अनादि नियम हैकि त्यागी होके केवलज्ञान उत्पन्न करके स्व परोपकारके वास्तें धर्मोपदेश करनां. तीर्थंकर अपने अवधिज्ञानसे देख लेतेहैकि अब हमारे संसारिक भोग्य कर्म नही रहाहै और अमुक दिन हमारे संसार गृहवास त्यागनेकाहै तिस दिनही त्यागी हो जातेहै. श्रीमहावीरस्वामीकी बाबतभी इसी तरें जान लेनां.

प्र. ३४—परोपकार करनां यह हरेक मनुष्यकों करनां उचितहै.

उ.—परोपकार करनां यह सर्व मनुष्योंकों करनां उचितहै, धर्मी पुरुषकोंतो अवश्यही करनां उचितहै.

प्र. ३५—श्रीमहावीरजीने किस वस्तुका त्याग करा था.

उ.—सर्व सावद्य योगका अर्थात् जीव-

हिंसा १ मृषावाद २ अदत्तादान ३ मैथुन स्त्री आदिकका प्रसंग ४ सर्व परिग्रह ५ इत्यादि सर्व पके कृत्य करने करावने अनुमतिका त्याग कराथा

प्र.३६—श्रीमहावीरजीने अनगारपणा कब लीनाथा और किस जगेमें लीनाथा और कितने वर्षकी उमरमें लीनाथा.

उ·—विक्रमसें पहिलें ५१२ वर्षे मगसिर वदी दशामीके दिन पिछले पहरमे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें विजय महुर्त्तमें चंद्रप्रभा शिवकामें वैठके चार प्रकारके देवते और नंदि वर्द्धन राजाप्रमुख हजारों मनुष्योंसें परिवरे हुए नानाप्रकारके वाजित्र वजते हुए वडे भारी महोत्सवसें न्यातवनषंड नाम वागमे अशोकवृक्षके हेठे जन्मसें तीस वर्ष व्यतीत हुए दीक्षा लीनीथी. मस्तकके केश अपने हाथसें लुंचन करे और अंदरके क्रोध, मान, माया, लोभका लुंचन करा.

प्र. ३७—श्री महावीरजीकों दीक्षा लेनेसें तुरत ही किस वस्तुकी प्राप्ति हुइथी·

उ·—चौथा मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हुआथा·

प्र. ३८—मनःपर्यवज्ञान भगवंतकों गृहस्थावस्थामें क्युं न हुआ.

उ.—मनःपर्यवज्ञान निर्ग्रंथ संयमीकोंही होताहै अन्यको नही.

प्र. ३९—ज्ञान कितने प्रकारकेहैं.

उ.—पांच प्रकारके ज्ञानहै.

प्र.४०—तिन पांचो ज्ञानके नाम क्या क्याहै.

उ.—मतिज्ञान १ श्रुतिज्ञान २ अवधिज्ञान ३ मनःपर्यवज्ञान ४ केवलज्ञान ५

प्र. ४१—इन पांचो ज्ञानोंका थोमासा स्वरूप कहो.

उ.—मतिज्ञान विनाही सुनेके, जो ज्ञान होवे तथा चार प्रकारकी जो बुद्धिहै सो मतिज्ञानहै. इसके ३३६ तीनसौ उत्तीस भेदहै. जो कहने सुननेमे आवे सो श्रुतिज्ञान है; तिसके १४ चौदह भेदहै. अवधिज्ञान सर्व रूपी वस्तुकों जाने देखे; तिसके ६ भेद है. मनःपर्यवज्ञान अढाइ द्वीपके अंदर सर्वके मन चिंतित अर्थको जाने देखे. तिसके दोय २ भेदहै. केवलज्ञान भूत, भ-

विष्यत्, वर्त्तमानकालको वस्तु सूक्ष्म बादर रूपी अरूपी व्यवध्यान रहित व्यवधान सहित दूर नेडे अंदर बाहिर सर्व वस्तुकों जाने, देखेहै; इस ज्ञानके भेद नहीहै. इन पांचो ज्ञानोका विशेष स्वरूप देखना होवेतो नंदिसूत्र मलयगिरि वृत्ति सहित वांचना वा सुन लेना.

प्र. ४२—श्रीमहावीरस्वामी अनगार होकर जब चलने लगेथे तब तिनके भाइ राजा नंदिवर्द्धनने जो विलाप कराथा सो थोडासा श्लोकोंमें कह दिखलावो.

उ.—त्वया विना वीर कथं व्रजामो ॥ गृहेधुना शून्य वनोपमाने ॥ गोष्टी सुखं केन सहाचरामो । भोक्ष्यामहे केन सहाथ बंधो ॥ १ ॥ अस्यार्थः ॥ हे वीर तेरे एकलेको छोडके हम सूने वन समान अपने घरमें तेरे विना क्युंकर जावेंगे, अर्थात् तेरे विना हमारे राजमहिलमे हमारा मन जानेको नही करताहै, तथा हे बंधव तेरे विना एकांत बेठके अपने सुख दुखकी वातां करन रूप गोष्टी किसके साथ मैं करूंगा तथा हे

वंधव तेरे विना मैं किसके साथ वैठके भोजन जीमुगा; क्योंके तेरे विना अन्य कोइ मेरा त्रिशलाका जाया भाइ नही है १ सर्वेषु कार्येषु च वीर वीरे ॥ त्यामंत्रणदर्शनतस्तवार्य ॥ प्रेमप्रकर्षादभजामहर्षं निराश्रयाश्चाथकमाश्रयामः ॥२॥ अर्थ ॥ हे आर्य उत्तम सर्व कार्यके विषे वीर वीर ऐसे हम तेरेकों बुलातेथे और हे आर्य तेरे देखनेसे हम वहुत प्रेमसें हर्षकों प्राप्त होतेथे; अव हम निराश्रय होगयेहैं, सो किसकों आश्रित होवें, अर्थात् तेरे विना हम किसकों हे वीर हे वीर कहेंगे, और देखके हर्षित होवेगे ॥२॥ अति प्रियं बांधव दर्शनं ते ॥ सुधांजनं भाविक दास्म दृशोः नीरागचित्तोपिकदाचिदस्मान् ॥ स्मरिष्यसि प्रौढ गुणाभिराम ॥३॥ अस्यार्थः ॥ हे बांधव तेरा दर्शन मेरेकों अधिक प्रियहै, सो तुमारे दर्शन रूप अमृतांजन हमारी आंखो में फेर कद करेगा. हे महा गुणवान् वीर तूं निराग चित्तवाला तोभी कदेक हम प्रिय वंधवांकों स्मरण करेगा ३ इत्यादि विलाप करेथे.

प्र॰ ४३—श्रीमहावीरस्वामी दीक्षा लेके जब प्रथम विहार करनें लगेथे तिस अवसरमें शक्रइंद्रनें श्रीमहावीरजीकों क्या विनती करीथी॰

उ॰—शक्रइंद्रनें कहाकि हे भगवन् तुमारे पूर्व जन्मोंके बहुत असाता वेदनीयादि कठिन कर्मोंके बंधनहै तिनके प्रभावसें आपकों छद्मस्थाव-स्थामें बहुत भारी उपसर्ग होवेंगे जेकर आपकी अनुमति होवे तो मैं तुमारे साथही साथ रहुं और तुमारे सर्व उपसर्ग टालुं अर्थात् दूर करुं.

प्र॰ ४४—तब श्रीमहावीरजीने इंद्रको क्या उत्तर दीनाथा.

उ॰—तब श्रीमहावीरजीने इंद्रकों ऐसें कहा के हे इंद्र यह बात कदापि अतीत कालमें नही हुइहै अबभी नहीहै और अनागत कालमे भी नही होवेगी के किसीभी देवेंद्र असुरेंद्रादिके साहाय्यसें तीर्थंकर कर्मक्षय करके केवलज्ञान [illegible]त्पन्न करतेहै; किंतु सर्व तीर्थंकर अपने [illegible] [illegible]मसें केवलज्ञान उत्पन्न करतेहै इस वास्ते दूसरेकी साहाय्य विना अपनेही प्राक्रमसें

ज्ञान उत्पन्न करेंगे.

प्र. ४५—क्या श्रीमहावीरजीकी सेवामें इंद्रादि देवते रहते थे.

उ.—छद्मस्थावस्थामें तो एक सिद्धार्थनामा देवता इंद्रको आज्ञासें मरणांत कष्ट दुर करने वास्ते सदा साथ रहता था; और इंद्रादि देवते किसि किसि अवसरमें वंदना करने सुखसाता पूछने वास्ते और उपसर्ग निवारण वास्ते आते थे और केवलज्ञान उत्पन्न हूआ पीछतो सदाही देवते सेवामे हाजर रहतेथे.

प्र. ४६—श्रीमहावीरजीने दीक्षा लीया पीछे क्या नियम धारण कराथा.

उ.—यावत् छद्मस्थ रहुं तावत् कोइ परीषह उपसर्ग मुझकों होवे ते सर्व दीनता रहित अन्य जनकी साहायसें रहित सहन करुं. जिस स्थानमे रहनेसें तिस मकान वालेकों अप्रीति उत्पन होवे तो तहां नही रहेनां १ सदाही कायोत्सर्ग अर्थात् सदा खडा होके दोनो बाहां शरीरके अनलगती हुइ हेठकों लांबी करके पगोंमे

चार अंगुल अंतर रखके थोमासा मस्तक नीचा नमावी एक किसी जीव रहित वस्तु उपर दृष्टि लगाके खमा रहुंगा २; गृहस्तका विनय नही करुंगा ३; मौन धारके रहुंगा ४; हाथमेही लेके न्नोजन करुंगा, पात्रमे नही ५. ये अभिग्रह नियम धारण करेथे.

प्र॰४७—श्रीमहावीरस्वामीजीने उद्मस्थ कालमे कैसे कैसे परीग्रह परीषह उपसर्ग सहन करे थे तिनका संक्षेपसें व्यान करो.

उ॰ प्रथम उपसर्ग गोवालीयेने करा १ शूलपाणिके मंदिरमें रहे तहां शूलपाणी यक्षने उपसर्ग करे ते ऐसे अदृष्ट हांसी करके मराया १ हाथीका रूप करके उपसर्ग करा २ सर्पके रूपसें ३ पिशाचके रूपसें ४ उपसर्ग करा. पीछे मस्तकमे १ कानमे २ नाकमे ३ नेत्रोंमे ४ दांतोमें ५ पुंठमें ६ नखेमें ७ अंन्य सुकुमार अंगोमें ऐसी पीमा कीनीके जेकर सामान्य पुरुष एक अंगमेन्नी ऐसी पीमा होवे तो तत्काल मरण पावे, परं न्नगवंतनेतो मेरुकी तरें अचल होके अदीन मनसें सहन

करे, अंतमे देवता थकके श्री महावीरजीका सेवक बना शांत हूआ. चंम कौशिक सर्पने मंक मारा परं न्नगवंततो मरा नही, सर्प प्रतिबोध हूआ. सुदंष्ट नाग कुमार देवताका उपसर्ग संबल कंबल देवतायोंने निवारा. न्नगवंततो.कायोत्सर्गमें खमेथे. लोकोंने बनमे अग्नि बालो लोक तो चले गये पीछे अग्नि सूके घासादिकों बालती हूइ न्नगवंतके पगों.हेठ आ गइ, तिस्से न्नगवंत के पग दग्ध हूए परं न्नगवंतने तो कायोत्सर्ग गेमा नही. तहांही खमे रहे. कटपूतना देवीने माघमासके दिनोंमें सारी रात न्नगवंतके शरीरकों अत्यत शीतल जल गंटा, न्नगवंततो चलायमान नही हुए. अंतमे देवी थकके न्नगवंतकी स्तुति करने लगी. संगम देवताने एक रात्रिमें वीस उपसर्ग करे वे एसेंहै न्नगवंतके उपर धूलिकी वर्षा करी जिस्सें न्नगवंतके आंख कानादि श्रोत बंद होनेसें स्वासोत्सासेसें रहित हो गये तोन्नी ध्यानसे नही चले १ पीछे वज्रमुखी कोमीयों बनाके न्नगवंतका शरीर चालनिवत् सछिड करा २ वज्र

चूंचवाले दंशोने बहु पीमा करी ३ तीक्ष्ण चूंच-
वाली घीमेल वनके खाया ४ विछु ५ सर्प्प ६ न-
ऊल ७ मूसे ८ के रूपोसें रुंक मारा और मांस
नोची खाधा. हाथी ए हथणी १० वनके सूंरु
दांतका घाव करा पग हेठ मर्दन करा तोन्नी न्न-
गवंत वज्र रूषन्न नाराच नामक संहनन वाले
होनेसे नही मरे. पिशाच वनके अट्टहास्य करा
११ सिंह वनके नख दाम्रायोंसे विदारथा, फारुया
१२ सिद्धार्थ त्रिशलाका रूप करके पुत्रके स्नेहके
विलाप करे १३ स्कंधावारके लोक वनाके न्नग-
वंतके पगों ऊपर हांमी रांधी १४ चंमालके रू-
पसें पंखियोंके पंजरे न्नगवंतके कान बाहु आ-
दिमे लगाये तिन पक्षीयोंने शरीर नोंचा १५ पीछे
खर पवनसें न्नगवंतकों गेंदकी तरे उन्नाल २ के
धरती ऊपर पटका १६ पीछे कलिका पवन क-
रके न्नगवंतकों चक्रकी तरे घुमाया १७ पीछे चक्र
मारा जिससें न्नगवंत जानु तक न्नूमिमे धस गये
१८ पीछे प्रन्नात विकुर्वी कहने लगा विहार करो.
न्नगवंततो अवधिज्ञानसें जानतेथे के अवीतो रा-

त्रिहै १ए पीछे देवांगनाका रूप करके हाव ज्ञावादि करके उपसर्ग दीना २० इन वीसों उपसर्गोंसें जव ज्ञगवंत किंचित् मात्रज्ञी नही चले तव संगमदेवताने ठमास तक ज्ञगवंतके साथ रहके उपसर्ग करे, अंतमें थकके अपनी प्रतिज्ञासें भ्रष्ट होके चला गया. अनार्य देशमे ज्ञगवंतको बहुत परीसह उपसर्ग हुए. अंतमे दोनो कानोंमें गोवालीयोंने कांसकी सलीयो फाली तिनसें वहुत पीमा हुइ सो मध्यम पावापुरी नगरीमे खरकवैद्य सिद्धार्थ नामा वाणियानें कांसकी सलीयों कानोंमेंसे काढी ज्ञगवंत निरुपक्रमायुवाले थे इससें उपसर्गोमे मरे नही, अन्य सामान्य मनुष्यकी क्या शक्तिहै, जो इतने डुख होनेसें न मरे. विशेष इनका देखना होवेतो आवश्यक सूत्रसें देख लेना.

प्र. ४०–श्रीमहावीरस्वामीकों उपसर्ग होनेका क्या कारण था.

उ.–पूर्व जन्मांतरोमें राज्य करणेसें अत्यंत पाप करे वे सर्व इस जन्ममेंही नष्ट होने चाहिये

इस वास्ते असाता वेदनीय कर्म निकाचितनें अ-
पने फल रूप उपसर्गसें कर्म जोग्य कराके दूर
होगये, इस वास्ते वहुत उपसर्ग हुए.

प्र. ४९—श्रीमहावीरजीने परीषहे किस वा-
स्ते सहन करे और तप किस वास्ते करा.

उ.—जेकर जगवंत परीषहे न सहन करते
और तप न करते तो पूर्वोपार्जित पाप, कर्म
क्षय न होते, तवतो केवलज्ञान और निर्वाण पद
ये दोनो न प्राप्त होते इस वास्ते परीषहे उपसर्ग
सहन करे, और तपजी करा.

प्र. ५०—श्रीमहावीरजीने छद्मस्थावस्थामें
तप कितना करा और जोजन कितने दिन कराथा,

उ.—इसका स्वरूप नीचलेयंत्रसे समझ लेनां.

छ मासी	छ मासी तप १	चार मासी	तीन मासी	अढाइ मास तप	दो मासी तप	डेढ मास तप	मास क्षपण तप	पखवाडीयातप
तप १	पांच दिन न्यून	९	२	२	६	२	१२	७२
भद्र प्रतिमा तप	महा भद्र तप ४	सर्वतो भद्र तप	छठ तप	अठम तप	सर्व पारणां	दिक्षा दिन	सर्वकाल तप छर पारणा एकत्र करै	
दिन २	४	१०	२२९	१२	३४९	१	१२ वर्ष मास ६ दिन १५	

प्र. ५१–श्रीमहावीरजीकों दीक्षा लीये पीछे कितने वर्ष गये केवलज्ञान उत्पन्न हुआथा.

उ.–१२ वर्ष ६ मास ऊपर १५ पंदरादिन इतने काल गये पीछे केवलज्ञान ऊत्पन्न हुआथा.

प्र. ५२–श्रीमहावीरजीकों केवलज्ञान कैसी अवस्थामें और किस जगें, उत्पन्न हुआथा.

उ.–वैशाख शुदि १० दशमीके दिन पिछले चौथे पहरमें जृंभिक गाम नगरके बाहिर ऋजु-वालुका नामे नदीके कांठे ऊपर वैयावृत्त नामा व्यंतर देवताके देहरेके पास श्यामाक नामा गृह-पतिके खेतमें साल वृक्षके नीचे गाय दोहनेके अवसरमें जैसें पगथलीयोंके भार बैठतेहै तैसें उ-त्कटिका नाम आसनेबैठे आतापना लेनेकी जगें आतापना लेते हुए, तिस दिन दूसरा उपवास छठ भक्त पाणि रहित करा हुआथा. शुक्ल ध्यानके दूसरे पादमे आरूढ हुआकों केवलज्ञान हुआथा.

प्र. ५३–भगवंतकों जब केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था तब तिनकी कैसी अंवस्था हुइथी.

उ.–सर्वज्ञ सर्वदर्शी अरिहंत जिन केवली

रूप अवस्था हुइथी.

प्र. ५४—भगवंतकी प्रथम देशनासें किसी-कों लाभ हुआथा.

उ.—नही ॥ शुनने वालेतो थे, परंतु किसीकों तिस देशनासें गुण नही उत्पन्न हुआ.

प्र. ५५—प्रथम देशना खाली गइ तिस बनावकों जैन शास्त्रमें क्या नाम कहतेहै.

उ —अछेरा भूत अर्थात् आश्चर्य भूत जैन शास्त्रमें इस बनावका नाम कहाहै.

प्र. ५६—अछेरा किसकों कहतेहै.

उ.—जो वस्तु अनंते काल, पीछे आश्चर्य कारक होवे तिसकों अछेरा कहतेहै, क्योंकि कोइभी तीर्थंकरकी देशना निःफल नही जातीहै और श्रीमहावीरजीकी देशना निष्फल गइ, इस वास्ते इसको अछेरा कहतेहै.

प्र.५७—श्रीमहावीरजीतो केवलज्ञानसें जानते थे कि मेरी प्रथम देशनासें किसीकोंभी कुछ गुण नही होवेगा, तो फेर देशना किस वास्ते दीनी.

उ.—सर्व तीर्थंकरोंका यह अनादि नियम

है कि जब केवलज्ञान उत्पन्न होवे तव अवश्यही देशना देते है तिस देशनासें अवश्यमेव जीवांको गुण प्राप्त होताहै, परं श्रीवीरकी प्रथम देशनासें किसीको गुण न हुआ; इस वास्ते अछेरा कहाहै·

प्र. ५८–श्रीमहावीर ज्ञगवंते दूसरी देशना किस जगें दीनीथी.

उ.–जिस जगें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था तिस जगासें ४८ कोसके अंतरे अपापा नामा, नगरी थी, तिससें इशान कोनमे महासेन वन नामे उद्यान था तिस वनमें श्रीमहावीरजी आए; तहां देवतायोने समवसरण रचा· तिसमें वैठके श्रीमहावीर ज्ञगवंते देशना दूसरी दीनी·

प्र. ५९–दूसरी देशना सुनने वास्ते तहां कोन कोन आये थे और तिस दूसरी देशनामें क्या वमा ज्ञारी वनाव वना था और किस किसनें दीक्षा लीनी, और ज्ञगवंतके कितने शिष्य साधु हूए, और वमी शिष्यणी कौन हूइ.

उ.–चार प्रकारके देवता और चार प्रकारकी देवी मनुष्य, मनुष्यणी इत्यादि धर्म सुननेकों आये थे.

भगवंतकी देशना सुनके वहुत नर नारी अपापा नगरीमें जाके कहने लगे, आजतो हमारो पुन्यदशा जागी जो हमने सर्वज्ञके दर्शन करे, और तिसकी देशना सुनी हमने तो ऐसी रचनावाला सर्वज्ञ कदेइ देखा नही; यह वात नगरमे विस्तरी तिस अवसरमें तिस अपापा नगरोमें सोमल नामा ब्राह्मणनें यज्ञ करनेका प्रारंभ कर रक्का था, तिस यज्ञके कराने वाले इग्यारें ब्राह्मणोंके मुख्याचार्य बुलवाये थे, तिनके नामादि सर्व ऐसें थे. इंद्रभूति १ अग्निभूति २ वायुभूति ३ ये तीनो सगे भाइ, गौतम गोत्री, इनका जन्म गाम मगधदेशमें गोवरगाम, इनका पिता वसुभूति, माताका नाम पृथिवी, उमर तीनोकी गृहवासमें क्रमसे ५० । ४६ । ४२ । वर्षकी इनके विद्यार्थी ५०० पांच पांचसौ चतुर्दश विद्याके पारगामी चौथा अव्यक्त नामा १ भारद्वाज गोत्र २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेस ३ पिताका नाम धनमित्र ४ माता वारुणी नामा ५ गृहवासें उमर ५० वर्षकी ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या १४

का जान ८· पांचमा सुधर्म नामा १ अग्निवैश्या-यन गोत्री २ जन्म गाम कोल्लाक सन्निवेस ३ पिता धम्मिल ४ भद्दिला माता ५ गृहवास ५० वर्ष ६ विद्यार्थी ५०० सौ ७ विद्या । १४ । ८. छठा मंडिकपुत्र नाम १ वाशिष्ठ गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेश ३ पिता धनदेव ४ माता विजय-देवा ५ गृहवास ६५ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या । १४ । ८· सातमा मौर्य पुत्र नाम १ का-श्यप गोत्र २ जन्म गाम मौर्य सन्निवेस ३ पिता मौर्य नाम ४ माता विजयदेवा ५ गृहवास ५३ वर्ष ६ विद्यार्थी ३५० सौ ७ विद्या । १४ । ८. आ-ठमा अकंपित नाम १ गौतम गोत्र २ जन्म गाम मिथिला ३ पिता नाम देव ४ माता जयंती ५ गृ-हवास ४८ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४ । ८. नवमा अचलभ्राता नाम १ गोत्र हारीत २ जन्म गाम कोशला ३ पिता नाम वसु ४ नंदा माता ५ गृहवास ४६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ, विद्या १४ । ८. दसमेका नाम मेतार्य १ गोत्र कौ-ण्डिन्य २ जन्म गाम कौशला वत्स भूमिमे ३

पिता दत्त ४ माता वरुणदेवा ५ गृहवास ३६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० तीनसौ ७ विद्या १४ । ᑕ. इग्यारमा प्रभास नामा १ गौत्र कौण्डिन्य २ जन्म राजगृह ३ पिता बल ४ माता अतिभद्रा ५ गृहवास १६ वर्ष ६ विद्यार्थी ३०० सौ ७ विद्या १४ । ᑕ. इस स्वरूप वाले इग्यारे मुख्य ब्राह्मण यज्ञपाड़ेमें थे तिनोंके कानमें पूर्वोक्त शब्द सर्वज्ञकी महिमाका पड़ा, तव इंद्रभूति गौतम अभिमानसें सर्वज्ञका मान भंजन करने वास्ते भगवंतके पास आया । तिनकों देखके आश्चर्यवान् हुआ; तव भगवंतने कहा हे इंद्रभूति गौतम तुं आया; तव गौतम मनमें चिंतने लगा मेरे नाम लेनेसें तो मै सर्वज्ञ नही मानुं, परं मेरे रिदय गत संशय दूर करे तो सर्वज्ञ मानुं. तव भगवंतने तिनके वेद पद और युक्तिसे संशय दूर करा. तव ५०० सौ छात्रा सहित गौतमजीने दीक्षा लीनी, ए बड़ा शिष्य हुआ. इसी तरे इग्यारेहीके मनके संशय दूर करे और सर्वने दीक्षा लीनी. सर्व ४४०० सौ इग्यारे अधिक शिष्य हुए. इग्यारेंके मनमें जीवहै के

नही १ कर्महैके नही २ जो जीवहै सोइ शरीरहै वा शरीरसे जीव अलगहै ३ पांच भूतहै वा नही ४ जैसा इस जन्ममे जीवहै जन्मांतरमें ऐसाही होवेगा के अन्य तरेंका होवेगा ५ मोक्षहै के नही ६ देवते है के नही ७ नारकीहै के नही ८ पुन्य है के नही ९ परलोकहै के नही १० मोक्षका उपाय है के नही ११. इनके दूर करनेका संपूर्ण कथन विशेषावश्यकमेहै. तिस दिनही चंपाके राजा दधिवाहनको पुत्री कुमारी ब्रह्मचारणी चंदनवालाने दीक्षा लीनी. यह वडी शिष्यणी हुइ. इसके साथ कितनीही स्त्रीयोंने दीक्षा लीनी. दूसरी देशनामे यह वनाव वनाथा.

प्र. ६०—गणधर किसकों कहतेहै.

उ.–जिस जीवनें पूर्व जन्ममे शुभ करणी करके गणधर होनेका पुन्य उपार्जन करा होवे सो जीव मनुष्य जन्म लेके तीर्थंकरके साथ दीक्षा लेताहै अथवा तीर्थंकर अर्हतको जव केवलज्ञान होताहै तिनके पास दीक्षा लेताहै, और वडा शिष्य होताहै; तीर्थंकरकें मुखसें त्रिपदी सुनके ग-

णधर लब्धिसें चौदहे पूर्व रचताहै और चार ज्ञानका धारक होताहै. तिसकों तीर्थंकर नगवंत गणधर पद देतेहै और साधुयोंके समुदाय रूप गणकों धारण करता है, तिसकों गणधर कहतेहै.

प्र.६१–श्रीमहावीरजीके कितने गणधर हुए थे.

उ.–इग्यारें गणधर हुए थे, तिनके नाम ऊपर लिख आएहै.

प्र. ६२–संघ किसकों कहतेहै.

उ.–साधु १ साध्वी २ श्रावक ३ श्राविका ४ इन चारोंकों संघ कहतेहै.

प्र. ६३—श्रीमहावीर नगवंतके संघमें मुख्य नाम किस किसका था.

उ.–साधुयोंमे इंडनूति गौतम स्वामी नाम प्रसिद्ध १ साधवीयोंमें चंपा नगरीके दधिवाहन राजाकी पूत्री साधवी चंदनवाला २ श्रावकोंमें मुख्य श्रावस्ति नगरीके वसने वाले संख १ शतक २ श्राविकायोंमें सुलसा ३ रेवती ४ सुलसा राजगृहके प्रसेनिजित राजाका सारथी नाग तिसकी नार्या; और रेवती मेंढिक ग्रामकी रहने वाली

धनाढ्य गृह पत्नी थी·

प्र. ६४–श्रीमहावीरस्वामीनें किसतरेंका धर्म प्ररूप्या था

उ.–सम्यक्त पूर्वक साधुका धर्म और श्रावकका धर्म प्ररूप्या था·

प्र. ६५ सम्यक्त पूर्वक किसकों कहतेहै.

उ.–जगवंतके कथनकों जो सत्य करके ेंद, तिसकों सम्यक्त कहतेहै, सो कथन यहहै. ोककी अस्तिहै १ अलोकजीहै २ जीवजीहै ३ अजीवजीहै ४ कर्मका बंधजीहै ५ कर्मका मोक्ष जीहै ६ पुन्यजी है ७ पापजीहै ८ आश्रव कर्मका आवणाजी जीवमेंहै ९ कर्म आवनेके रोकणेका जपाय संवरजीहै १० करे कर्मका वेदना जोगनाजीहै ११ कर्मकी निर्जराजीहै कर्म फल देके खिरजातेहै १२ अरिहंतजीहै १३ चक्रवर्तीजीहै १४ बलदेव वासुदेवजीहै १५ नरकजीहै १६ नारकीजीहै १७ तिर्यंचजीहै १८ तिर्यंचणीजीहै १९ माता पिता रूपीजीहै २० देवता और देवलोकजीहै २१ सिद्धि स्थानजी है २२ सिद्धजीहै २३

परिनिर्वाणञ्जीहै २४ परिनिवृत्तञ्जीहै २५ जीवहिंसाञ्जीहै २५ जूठञ्जीहै २६ चौरीञ्जीहै २७ मैथुनञ्जीहै २८ परिग्रहञ्जीहै २९ क्रोध, मान माया, लोञ्ज, राग, द्वेष, कलह, अञ्याख्यान, पैशुन, परनिंदा, माया, मृषा, मिथ्यादर्शन, शल्य येञ्जी सर्व है. इन पूर्वोक्त जीव हिंसासें लेके मिथ्यादर्शन पर्यंत अठारह पापोंके प्रतिपक्षी अठारह प्रकारके त्यागञ्जीहै ३० सर्व अस्ति ञावकों अस्ति रूपे और नास्तिञावकों नास्तिरूपें ञगवंतने कहाहै ३१ अछे कर्मका अछा फल होताहै बुरे कर्मोका बुरा फल होताहै ३२ पुण्य पाप दोनो संसारावस्थामें जीवके साथ रहतेहै ३३ यह जो निर्ग्रंथोंके वचनहै वे अति ऊत्तम देव लोक और मोक्षके देने वालेहै ३४ चार काम करने वाला जीव मरके नरक गतिमें ऊत्पन्न होताहै. महा हिंसक, क्षेत्र वाग्नी कर्षण सर सोसादिसें महा जीवोंका वध करनेवाला १ महा परिग्रह तृष्णा वाला २ मांसका खाने वाला ३ पंचेंद्रिय जीवका मारने वाला ४ ॥ चार काम करने वाला मरके तिर्यंच

गतिमें उत्पन्न होताहै· माया कपटसें दूसरेके साथ ठगी करे १ अपने करे कपटके ढांकने वास्ते जुठ बोले २ कमती तोल देवे अधिक तोल लेवे ३ गुणवंतके गुण देख सुनके निंदा करे ४ चार काम करनेसें मनुष्य गतिमें उत्पन्न होताहै; भद्रिक स्वभाव वाले स्वभावें कुटलितासें रहित होवे १ स्वभावेहीं विनयवंत होवे २ दयावंत होवे ३ गुणवंतके गुणसुनके देखके द्वेष न करे ४॥ चार कारणसें देवगतिमें उत्पन्न होताहै; सरागी साधुपणा पालनेसें १ गृहस्थ धर्म देश विरति पालनेसें २ अज्ञान तप करनेसें ३ अकाम निर्जरासें ४ तथा जैसी नरक तिर्यंच गतिमे जीव वेदना भोगताहै और मनुष्यपणा अनित्यहै· व्याधि, जरा, मरण वेदना करके वहुत भरा हूआहै. इस वास्ते धर्म करणेमें उद्यम करो· देवलोकमें देवतायोंकों मनुष्य करतां वहुत सुखहै· अंतमे सोभी अनित्यहै. जैसें जीव कर्मोसें बंधाताहै और जैसें जीव कर्मसें छुटके निर्वाण पदकों प्राप्त होताहैं· और षटकायके जीवांका स्वरुप ऐसाहै पीछे साधुका

धर्म और श्रावकके धर्मका यह स्वरूपहै इत्यादि धर्म देशना श्री महावीर ज्ञगवंतें सर्वजातिके मनुष्यादिकोंकों कथन करीथी·

प्र. ६६–साधुके धर्मका थोमेसेमें स्वरूप कह दिखलाउ·

उ·–पांच महाव्रत और रात्रि ज्ञोजनका त्याग यह ठ वस्तु धारण करे. दश प्रकारका यति धर्म और सत्तरेंज्ञेदे संयम पालन करे; ४१ बैतालीस दोष रहित ज्ञिक्षा ग्रहण करे; दशविध चक्रवाल समाचारी पाले

प्र· ६७—श्रावक धर्मका थोमेसेमें स्वरूप कह दिखलाउ

उ–त्रस जीवकी हिंसाका त्याग १ बमे जुठका त्याग, अर्थात् जिसके बोलनेंसे राजसें दंम होवे, और जगतमें जुठ बोलने वाला प्रसिद्ध होवे. ऐसें चौरीमेंज्ञी जानना २ वडी चोरीका त्याग ३ परस्त्रीका त्याग ४ परिग्रहका प्रमाण ५ ठहें दिशामें जानेका प्रमाण करे. ज्ञोग परिज्ञोगका प्रमाण करे; बावीस अज्ञक्ष्य न खाने योग्य

वस्तुका ओर बतीस अनंत कायका त्याग करे. और १५ बुरे वाणिज व्यापार करनेका त्याग करे. विना प्रयोजन पाप न करे. सामायिक करे; देशावकाशिक करे; पोषध करे; दान देवे; त्रिकाल देव पूजन करे.

प्र. ६८—साधु श्रावकका धर्म किसवास्ते मनुष्योंको करना चाहिये.

उ.—जन्म मरणादि संसार भ्रमण रूप दुखसें छूटने वास्ते साधु और श्रावकका पूर्वोक्त धर्म करना चाहिये.

प्र. ६९—श्रीभगवंत महावीरजीनें जो धर्म कथन कराथा. सो धर्म श्रीमहावीरजीनें अपने हाथोंसे किसी पुस्तकमें लिखा था वा नही.

उ.—नही लिखाथा.

प्र. ७०—श्रीमहावीर भगवंतका कथन करा हुआ सर्व उपदेश भगवंतकी रूबरु किसी दूसरे पुरुषनें लिखाथा.

उ.—दूसरे किसी पुरुषने सर्व नही लिखाथा.

प्र. ७१—क्या लिखने लोक नही जानते

थे, इस वास्तें नही लिखा वा अन्य कोइ कारण था.

उ.—लिखनेतो जानते थे, परं सर्व ज्ञान लिखनेकी शक्ति किसीन्नी पुरुषमें नही थी, क्योंकें न्नगवंतने जितना ज्ञानमें देखा था तिसके अनंतमे न्नागका स्वरूप वचनद्वारा कहा था. जितना कथन करा था तिसके अनंतमें न्नाग प्रमाण गणधरोंने द्वादशांग सूत्रमें ग्रंथन करा, जेकर कोइ १२ वारमें अंग दृष्टिवादका तीसरा पूर्व नामा एक अध्ययन लिखे तो १६३८३ सोलांहजार तीन सौ त्रिराशी हाथीयों जितने स्याहीके ढेर लिखनेमें लगें, तो फेर संपूर्ण द्वादशांग लिखनेकी किसमे शक्ति हो सक्तीहै, और जब तोर्थंकर गणधरादि चौदह पूर्वधारी वियमानथे तिनके आगे लिखनेका कुछन्नी प्रयोजन नहीथा, और देशमात्र ज्ञान किसि साधु, श्रावकने प्रकरण रूप लिख लीया होवे, अपने पठन करने वास्ते, तो निषेध नही.

प्र. ७२—पूर्वोक्त जैनमतके सर्व पुस्तक

श्रीमहावीरसें और विक्रम संवत्की शुरुयातसें कितने वर्ष पीछे लिखे गये है.

उ.—श्रीमहावीरजीसें ९८० नवसौ अस्सी वर्ष पीछे और विक्रम संवत् ५१० में लिखे गये है,

प्र ७३–इन शास्त्रोंके कंठ और लिखनेमें क्या व्यवस्था बनी थी, और यह पुस्तक किस जगे किसने किस रीतीसे कितने लिखेथे.

उ.–श्रीमहावीरजीसें १७० वर्षतक श्रीभद्रबाहुस्वामी यावत् (द्वादशांग) चौदह पूर्व और इग्यारे अंग जैसें सुधर्मस्वामीने पाठ ग्रंथन करा था तैसाही था, परं भद्रबाहुस्वामीने बारां १२ चौमासे निरंतर नैपाल देशमें करे थे, तिस समयमें हिंदुस्थानमें बारां वर्षका काल पडाथा, जिसमें भिक्षा ना मिलनेसें एक भद्रबाहुस्वामीकों वर्जके सर्व साधुयोंके कंठसें सर्व शास्त्र बीच बीचसें कितनेही स्थल विस्मृत हो गये, जब बारां वरसका काल दूर हूआ, तब सर्व आचार्य साधु पाडलिपुत्र नगरमें एकठे हुए, सर्व शास्त्र

आपसमें मिलान करे तब इग्यारे अंग तो संपूर्ण हुए, परंतु चौदह पूर्व सर्व सर्वथा भूल गए, तब संघको आज्ञासें स्थुलभद्रादि ५०० सौ तीक्ष्ण बुद्धिवाले साधु नेपाल देशमें श्रीभद्रबाहुस्वामीके पास चौदह पूर्व सीखने वास्ते गये, परंतु एक स्थुलभद्रस्वामीने दो वस्तु न्यून दश पूर्व पाठार्थसें सीखे. शेष चार पूर्व केवल पाठ मात्र सीखे. श्री भद्रबाहुके पाट ऊपर श्री स्थुलभद्र स्वामी बैठे, तिनके शिष्य आर्यमहागिरिसुहस्तिसे लेके श्री वज्रस्वामी तक जो वज्रस्वामी श्री महावीरसें पीछे ५८४ में वर्ष विक्रम संवत् ११४ में स्वर्गवासी हुए है तहां तक येह आचार्य दश पूर्व और इग्यारे अंगके कंठाग्र ज्ञानवाले रहे, तिनके नाम आर्य महागिरि १ आर्यसुहस्ति २ श्री गुणसुंदरसूरि ३ श्यामाचार्य ४ स्कंधिलाचार्य ५ रेवतीमीत्र ६ श्री धर्मसूरि ७ श्री भद्रगुप्त ८ श्री गुप्त ९ वज्रस्वामी १० श्री वज्रस्वामीके समीपे तोसलीपुत्र आचार्यका शिष्य श्री आर्यरक्षित सूरिजीनें साढे नव पूर्व पाठार्थसें पठन करे. श्री

आर्यरक्षितसूरि तक सर्व सूत्रोंके पाठ उपर चा रोंही अनुयोगकी व्याख्या अर्थात् जिस श्लोकमें चरणकरणानुयोगकी व्याख्या जिन अक्षरोंसे क रतेथे तिसही श्लोकके अक्षरोंसे द्रव्यानुयोगकी व्याख्या और धर्मकथानुयोगकी और गणितानु योगकी व्याख्या करते थे. इसतरें अर्थ करणेकी रीती श्री सुधर्मस्वामीसे लेके श्री आर्यरक्षितसूरि तक रही, तिनके मुख्य शिष्य विंध्यदुर्बलिका पु- ष्पादिकों बुद्धि जब चारतरेंके अर्थ समझनेमें ग- नराइ तब श्री आर्यरक्षितसूरिजीने मनमें वि- चार करा के इन नव पुर्वधारीयोंकी बुद्धिमें जब चार तरेंका अर्थ याद रखना कठिन पडता है, तो अन्य जीव अल्प बुद्धिवाले चार तरेंका सर्व शा- स्त्रोंका अर्थ क्युं कर याद रखेंगे, इस वास्ते सर्व शास्त्रोंके पाठोंका अर्थ एकेक अनुयोगकी व्याख्या शिष्य प्रशिष्योंकों सिखाइ. शेष व्यवछेद करी सोइ व्याख्या जैन श्वेतांबर मतमे आचार्योंकी अ विछिन्न परंपरायसे आज तक चलती है, तिनके पीछे स्कंधिलाचार्य श्री महावीरजीके ९४ मे

पाट हुए है. नंदीसूत्रकी वृत्तिमें श्री मलयगिरि आचार्यै ऐसा लिखाहै कि श्री स्कंधिलाचार्यके समयमें बारां वर्ष १२ का डुर्निक्ष काल पमा, तिसमें साधुयोंकों भिक्षा न मिलनेसें नवीन पढना और पिछला स्मरण करना विलकुल जाता रहा. और जो चमत्कारी अतिशयवंत शास्त्रथे वेभी वहुत नष्ट हो गये. और अंगोपांगभी भावसें अर्थात् जैसे स्वरूप वालेथे तैसे नही रहे, स्मरण परावर्त्तनके अभावसें जब बारां वर्षका डुर्निक्ष काल गया और सुनिक्ष हूआ, तब मथुरा नगरीमें स्कंधिलाचार्य प्रमुख श्रमण संघने एकठे होके जो पाठ जितना जिस साधुके जिस शास्त्रका कंठ याद रहा सो सर्व एकत्र करके कालिक श्रुत अंगादि और कितनाक पूर्वगत श्रुत किंचित्मात्र रहा हुआ जोमके अंगादि घटन करे, इस वास्ते इसकों माथुरि वाचना कहते है. कितनेक आचार्य ऐसें कहतेहै १२ वर्षके कालके वससें एक स्कंधिलाचार्यकों वर्जके शेष सर्वाचार्य मर गये थे. गीतार्थ अन्य कोइभी नही रहा था,

परं सर्व शास्त्र भूलेतो नही थे; परंतु तिस का-
लमे इतनाही कंठ था, शेष अल्प बुद्धिके प्रभा-
वसें पहिलांही भूल गया था, तिस स्कंधिला-
चार्यके पीछे आठमे पाट और श्री वीरसें ३१ में
पाट देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण हुए, तिनका वृत्तांत
ऐसें जैन ग्रंथोमें लिखा है. सोरठ देशमें वेला-
कूलपत्तनमें अरिदमन नामे राजा, तिसका सेव-
क काश्यप गोत्रीय कामर्द्धि नाम क्षत्रिय, तिस-
की भार्या कलावती, तिनका पुत्र देवर्द्धिनामे,
तिसने लोहित्य नामा आचार्यके पास दीक्षा ली-
नी, इग्यारे अंग और पूर्व गत ज्ञान जितना अ-
पने गुरुकों आताथा, तितना पढ लिया, पीछे श्री
पार्श्वनाथ अर्हतकी पट्टावलिमे प्रदेशी राजाका
प्रतिबोधक श्री केशी गणधरके पट्ट परंपरायमें
श्री देवगुप्त सूरिके पासों प्रथम पूर्व पठन करा,
अर्थसें, दूसरे पूर्वका मूल पाठ पढते हुए श्री दे-
वगुप्त सूरि काल कर गये, पीछे गुरुने अपने पट्ट
ऊपर स्थापन करा. एक गुरुने गणि पद दीना,
दूसरेने क्षमाश्रमण पद दीना, तव देवर्द्धिगणि

क्षमाश्रमण नाम प्रसिद्ध हुआ. तिस समयमें जैन मतके ५०० पांचसौ आचार्य विद्यमान थे, तिन सर्वमें देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण युगप्रधान और मुख्याचार्य थे, वे एकदा समय श्री शत्रुंजय तीर्थमें वज्र स्वामिकी प्रतिष्ठा हुइ. श्री ऋषभदेवकी पित्तल मय प्रतिमाकों नमस्कार करके कपर्दि यक्षकी आराधना करते हुए; तव कपर्दि यक्ष प्रगट होके कहने लगा, हे भगवान्, मेरे स्मरण करनेका क्या प्रयोजन है. तव देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमणजीने कहा, एक जिनशासनका कामहै, सो यहहै कि वारें वर्षी डुकालके गये, श्री स्कंधिलाचार्यने माथुरी वाचना करीहै; तोभी कालके प्रभावसें साधुयोंकी मंद बुद्धिके होनेसें शास्त्र कंठसें भूलते जातेहैं. कालांतरमें सर्व भूल जावेंगे. इस वास्ते तुम साहाय्य करो. जिस्सें मैं ताम्र पत्रो ऊपर सर्व पुस्तकोंका लेख करुं; जिससें जैन शास्त्रकी रक्षा होवे. जो मंदबुद्धिवालाभी होवेगा सोभी पत्रों उपरि शास्त्राध्ययन कर सकेगा, तव देवतानें कहा मैं सानिध्य करुंगा, परंतु सर्व

धुर्योंकों एकठे करो और स्याही ताम्र पत्र वहुत संचित करो; लिखारियोंको वुलाओ; और साधारण द्रव्य श्रावकोंसें एकठा करावो; तव श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणनें पूर्वोक्त सर्व काम वल्लभी नगरीमें करा, तव पांचसौ आचार्य और वृद्ध गीतार्थोंनें सर्वांगोपांगादिकांके आलापक साधु लेखकोंनें लिखे, खरड़ा रुपसें; पीछे देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने सर्व अंगोपांगोके आलापक जोड़के पुस्तक रूप करे. परस्पर सूत्रांकी भुलावना जैसें भगवतीमे जहा पन्नवणाए इत्यादि अति देशकरे. सर्व शास्त्र शुद्धकरके लिखवाए. देवताकी सानिध्यतासें एक वर्षमें एक कोटी पुस्तक १००००००० लिखे. आचारंगका महाप्रज्ञा अध्ययन किसी कारणसें न लिखा, परं देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजी प्रमुख कोइभी आचार्यने अपनी मन कल्पनासें कुछभी नही लिखाहै. इस वास्ते जैन शास्त्र सर्व सत्य कर मानने चाहिये ॥ जो कोइ कोइ कथन समझमें नही आताहै, सो यथार्थ गुरु गम्यके अभावसें; परं गणधरोंके कथनमें किंचित्

मात्रभी भूल नहीहै. और जो कुछ किसी आचा-र्यके भूल जानेसें अन्यथा लिखाभी गया होवै तो भी अतिशय ग्यानी विना कोन सुधार सके; इस वास्ते तहमेव सच्चं जं जिणेहिं पन्नत्तं, इस पाठके अनुयायी रहना चाहिये.

प्र. ७४—जैन मतमै जिसकों सिद्धांत तथा आगम कहते हैं, वे कौनसे कौनसे है. और तिनके मूल पाठ १ निर्युक्ति २ भाष्य ३ चूर्णि ४ टीका ५ के कितने कितने ३२ वत्तीस अक्षर प्रमाण श्लोक संख्याहैं, यह संक्षेपसें कहो.

उ.—इस कालमें किसी रूढिके सबबसें ४५ पैंतालीस आगम कहे जातेहै, तिनके नाम और पंचांगीके श्लोक प्रमाण आगे लिखे हुए, यंत्रसें जान लेने. और इनमें विषय विधेय इस तरेका है. आचारंगमें मूल जैन मतका स्वरूप, और साधुके आचारका कथनहै. १ सूयगडांगमे तीनसौ ३६३ त्रसठ मतका स्वरूप कथनादि विचित्र प्रकारका कथनहै २ ठाणांगमें एकसें लेके दश पर्यंत जे जे वस्तुयो जगतमेंहै तिनका क-

थन है. ३ समवायांगमें एकसें लेके कोटाकोटि पर्यंत जे पदार्थ है तिनका कथन है ४. ज्ञगवतीमें गौतमस्वामोके करे हुए विचित्र प्रकारके ३६००० वत्तीस हजार प्रश्नोके उत्तर है. ५ ज्ञातामें धर्मी पुरुषोंकी कथाहै. ६ उपाशक दशामें श्री महावीरके आनंदादि दश श्रावकोंके स्वरूपका कथन है. ७ अंतगडमें मोक्ष गये ए० नव्वे जीवांका कथन है. ᴅ अणुत्तरोववाइमें जे साधु पांच अनुत्तर विमानमे उत्पन्न हुएहे, तिनका कथन है. ए प्रश्नव्याकरणमें हिंसा १ मृषावाद २ चौरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ इन पांचो पापांका कथन और अहिंसा १, सत्य २, अचौरी ३, ब्रह्मचर्य ४, परिग्रह त्याग ५ इन पांचो संवरोका स्वरूप कथन कराहे. १० विपाक सूत्रमें दश दुख विपाकी और दश सुख विपाकी जोवांके स्वरूपका कथन है. ११ इति संक्षेपसें अंगान्निधेय. उववाइमें २२ वावीस प्रकारके जीव काल करके जिस जिस जगें उत्पन्न होते है तिनका कथनादि, कोणकको वंदना विधि महावीरकी धर्म देशनादिका कथन

है. १ राजप्रश्नीयमें प्रदेशी राजा नास्तिक मती-
का प्रतिबोधक केशी गणधरका और देव विमा-
नादिकका कथन है. २ जीवाभिगममें जीव अ-
जीवका विस्तारसें चमत्कारी कथन करा है. ३
पन्नवणामें ३६ छत्तीस पदमे छत्तीस वस्तुका बहुत
विस्तारसें कथन है. ४ जंबुद्विप पन्नतिमें जंबुद्वी-
पादिका कथन है. ५ चंद्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्तिमें
ज्योतिष चक्रके स्वरूपका कथन है. ६, ७ निरा-
वलिकामें कितनेक नरक स्वर्ग जाने वाले जीव
और राजायोंकी लडाइ आदिकका कथन है. ८।
९। १०। ११॥ १२ आवश्यकमें चमत्कारी अति
सूक्ष्म पदार्थ नय निक्षेप ज्ञान इतिहासादिका क-
थनहै, १ दशवैकालिकमें साधुके आचारका कथन
है २ पिंडनिर्युक्तिमें साधुके शुद्धाहारादिकके स्व-
रूपका कथन है ३ उत्तराध्ययनमेंतो छत्तीस अ-
ध्ययनोमें विचित्र प्रकारका कथन कराहै ४ छहों
छेद ग्रंथोमें पद विभाग समाचारी प्रायश्चित आ
दिका कथन है ६ नंदीमे ५ पांच ज्ञानका कथन
करा है. १ अनुयोगद्वारमें सामायिकके उपर चार

वप्रसादजीनें अपने बनाए इतिहास तिमर ना-
सकमें लिखा है. बुलरसाहिबने १५०००० डेढ
लाख जैन मतके पुस्तकोंका पता लगाया है;
और यहभी मनमें कुविकल्प न करनाके यह
शास्त्र गणधरोंके कथन करे हुए है, इस वास्ते
सच्चे है, अन्य सच्चे नही, क्योंके सुधर्मस्वामीने
जेसे अंग रचेथे वैसेतो नही रहेहै. संप्रति काल-
के अंगादि सर्व शास्त्र स्कंधिलादि आचार्योने वां-
चना रूप सिद्धांत बांधेहै, इस वास्ते पूर्वोक्त आ-
ग्रह न करना, सर्व प्रमाणिक आचार्योंके रचे प्र-
करण सत्यकरके माननें, यही कल्याणका हेतुहै.

अंक.	सूत्र नामानि.	सूत्र मूल संख्या.	निर्युक्तिः	भाष्यं.	चूर्णिः	टीका.	सर्व संख्या.
	अथांगानि.						
१	आचारांग सूत्रं	२५००	४५०	०	८३००	१२०००	२३२५०
२	सूयगडांग सूत्रं	२१००	२५०	०	१००००	१२८५०	२५२००
३	ठाणांग सूत्रं.	३७७५	०	०	०	१५२५०	१९०२५
४	समवायांग सूत्रं.	१६६७	०	०	४००	३७७६	५८४३
५	भगवती सूत्रं.	१५७५२	०	०	४०००	१८६१६	३८३६८
६	ज्ञाता धर्मकथा सूत्रं.	६०००	०	०	०	४२५२	१०२५२

७	उपाशकदशांग सूत्रं.	८१२	०	०	०		
८	अंतगड सूत्र.	७९०	०	०	०	१३००	३०९४
९	अनुत्तरोत्तवाइ सू.	१९२	०	०	०		
१०	प्रश्नव्याकरण सूत्रं.	१२५०	०	०	०	४६००	५८५०
११	विपाक श्रुतांग सूत्रं.	१२१६	०	०	०	९००	२११६

अथोपांगानि.

१ १२	उववाइ सूत्रं.	११६७	०	०	०	३१२५	४२९२
२ १३	राजप्रश्नाय सूत्रं.	२०७८	०	०	०	६०००	८०७८

३ १४	जीवाभिगम सूत्रं.	४७००	०	०	१५००	१३००० टिप्पन ११००	२०३००
४ १५	पन्नवणा सूत्रं.	७८००	०	०	०	लघु ३७२८ बृहत् १४००	२५९२८
५ १६	जंबूद्वीप पन्नत्ति सूत्रं.	४१४६	०	०	१८६०	१६०००	२२००६
६ १७	चंद पन्नति सूत्रं.	२२००	०	०	०	९११४	११३१४
७ १८	सूर्य पन्नत्ति सूत्रं.	२२००	०	०	०	९०००	११२००

८ १९	निरावलिया सुयखंध सूत्रं. कप्पिया सूत्रं.						
९ २०	कप्पवडंसिया सूत्रं.						
१० २१	पुप्फिया सूत्रं	११०९	०	०	०	७००	१ए०९
११ २२	पुप्फचूलिया सूत्रं.						
१२ २३	वन्हिदशांग सूत्रं.						

अथ मूल सत्राणि.

१ २४	आवश्यकं.	१००	३१००	०	१८०००	२२००० टिप्पन ४६००	४७८००

	विशेषावश्यकं	५०००	०	०	०	लघु १४००० बृहत् २८०००	४७०००
	पाक्षिकं सूत्रं.	३००	०	०	४००	२७००	३४००
	ओघनिर्युक्तिः	११७०	०	३०००	७००	७०००	११८७०
२ २५	दशवैकालिकं सूत्रं.	७००	४५०	०	७०००	लघु २७०० बृहत् ६८१०	१७६६०
३ २६	पिंडनिर्युक्तिः	७००	०	०	०	लघु ४००० बृहत् ७०००	११७००

४ २७	उत्तराध्ययन सूत्रं.	२०००	५००	०	६०००	लघु १२००० वृहत् १७६४५	३०१४५

अथ छेद सूत्राणि.

१ २०	दशाश्रुत स्कंध सूत्रं.	१८३०	१६८	०	२२२५	०	४२२३
२ २९	बृहत्कल्प सूत्रं.	४७३	०	लघु ८००० वृहत् १२०००	१४००० विशेष ११०००	४२०००	८७४७३
३	व्यवहार सूत्र.	६०००	०	६०००	१०३६१	३३६२५	५०५८६
	पंचकल्प सूत्रं.	११३३	०	३१२५०	३१३०	०	७३८८

	जीतकल्प सूत्रं.	२०५	०	३१२४	१००० विशेपचूर्णि ११०००	७०००	२२३२९
५ ३२	निशिथ सूत्रं.	८१५	०	लघु ७४०० वृहत् १२०००	२८०००	०	४८२१५
६ ३३	महानिशिथ.	लघुवांचना ३५००		मध्यम वांचना ४२००		वृहद्वांचना ४५००	१२२००

पइन्ना सूत्राणि.

१ ३४	चतुःशरण सूत्रं.	६४	०	०	०	०	६४
२ ३५	आनुरमत्याख्यानं सूत्रं.	८४	०	०	०	०	८४

३ ३६	भक्तपरिज्ञा सूत्रं.	१७१	०	०	०	०	१७१
४ ३७	महाप्रत्याख्यानं सूत्रं.	१३४	०	०	०	०	१३४
५ ३८	तंदुलवेयालीय सूत्रं.	४००	०	०	०	०	४००
६ ३९	चंद्रवेध्यक सूत्रं.	१७६	०	०	०	०	१७६
७ ४०	गणिविद्या सूत्रं.	१००	०	०	०	०	१००
८ ४१	मरणसमाधि सूत्रं.	६५६	०	०	०	०	६५६
९ ४२	देवेंद्र स्तव सूत्रं वीर स्तव सूत्रं	२००	०	०	०	०	२००

१० ९३	गच्छाचार सूत्रं.	१३८	०	०	०	०	१३८
	संस्तारक सूत्रं	१२२	०	०	०	०	१२२
	चूलिका सूत्रं,	रुषिभाषित सूत्र. ७००	ज्योतिस्क करंड सूत्र. १८५०	सिद्धप्राभृत सूत्र. १३३८	वसुदेवहिंडि प्रथम खंड. ११०००	मध्यमखंड १९००० द्वीपसागर पन्नति २५००	तीर्थोद्धार सूत्र १५०० अंगविद्या ९००० ये भी ४५ के अंतर भूतही है.
१ ४४	नंदि सूत्रं.	७००	०	०	२००१	लघु २३१२ बृहत् ७७३५	१२७५८
२ ४५	अनुयोगद्वार सूत्रं.	१८९९	०	०	३०००	लघु ३५०० बृहत् ६५००	१४८९९

प्र. ७५—श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां जैन मतका कोइ पुस्तक लिखा हुआ थाके नही.

उ.—अंगोपांगादि शास्त्रतो लिखे हुए नही मालुम होतेहै, परंतु कितनेक अतिशय अद्भुत चमत्कारी विद्याके पुस्तक और कितनीक आम्नायके पुस्तक लिखे हुए मालुम होतेहै, क्योंकि विक्रमादित्यके समयमें श्री सिद्धसेन दिवाकर नामा जैनाचार्य हुआहै, तिनोंनें चित्रकुटके किल्लेमैं एक जैन मंदिरमें एक बमाभारी एक पथरका बीचमे पोलाम्वाला स्तंभ देखा, तिसमे श्री सिद्धसेनसें पहिले होगए कितनेक पूर्वधर आचार्योंने विद्यायोंके कितनेक पुस्तक स्थापन करेथे, तिस स्तंभका ढांकणा ऐसी किसी ऊपधीके लेपसे बंद करा था कि सर्व स्तंभ एक सरीखा मालुम पमताथा; तिस स्तंभका ढांकणा श्री सिद्धसेन दिवाकरकों मालुम पमा, तिनोंने किसीक औषधीका लेप करा तिससें स्तंभका ढांकणा खुल गया. जब पुस्तक देखनेकों एक निकाला तिसका एक पत्र वांच्या,

तिसके ऊपर दो विद्या लिखी हुइथी. एक सुवर्ण सिद्धी १ दूसरी परचक्र सैन्य निवारणी २ इन दोनो विद्यायोंके वांचे पीछे जब आगे वांचने लगे तब तिन विद्यायोंके अधिष्टाता देवताने श्री सिद्धसेन कों कहा कि आगे मत वांचो, तुमारे ज्ञाग्यमें ये दोही विद्याहै । तब श्री सिद्धसेन दिवाकरजीनें स्तंज्ञका मुख बंद करा, वो एक पुस्तक अपने पास रखा, पीछे तिस पुस्तककों उज्जयन नगरीके श्री आवंती पार्श्वनाथजीके मंदिरमे गुप्तपणे कही रख दीया, पीछे वो पुस्तक श्री जिनदत्तसूरिजी महाराज जो विक्रम संवत् १२०४ मे थे तिनकों तिस मंदिरमेंसे मिला. अब वोही पुस्तक जैसलमेरके श्री चिंतामणि पार्श्वनाथजीके मंदिरमे बमे यत्नसें रखा हुआहै, ऐसा हमने सुनाहै. और चित्रकुटका स्तंज्ञ ज्ञूमिमें गरक हो गया, यह कथन कितनेक पट्टावलि प्रमुख ग्रंथोंमें लिखा हुआहै. इस वास्ते श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणसें पहिलां ज्ञी कितनेक पुस्तक लिखे हुए मालुम होतेहै.

प्र. ७६—श्री महावीरजीके समयमें कि-

तने राजे श्री महावीरके नक्त थे.

ज—राजगृहका राजे श्रेणिक जिसका दूसरा नाम नंनसार था, १ चंपाका राजा नंन सारका पुत्र अशोकचंद्र जिसका नाम कोणिक प्रसिद्ध था, २ वैशालिनगरीका राजा चेटक, ३ काशी देशके नव मल्लिक जातिके राजे और कोशल देशके नव लोच्छिक जातिके राजे २१ पुलासपुरका विजयनामा राजा २२ अमलकल्पा नगरीका स्वेतनामा राजा, २३ वीतनय पट्टनका नदायन राजा २४, कौशांबीका नदायन वत्स-राजा, २५, क्षत्रियकुंम ग्राम नगरका नंदिवर्द्धन राजा, २६ नज्जयनका चंदप्रद्योत राजा, २७ हिमालय पर्वतके नत्तर तर्फ पृष्टचंपाके शाल महाशाल दो नाइ राजे २८ पोतनपुरका प्रसन्नचंद्र राजा, २ए हस्तिशीर्ष नगरका अदिनशत्रु राजा, ३० क्रषन्नपुरका धनावह नामा राजा, ३१ वीरपुर नगरका वीरकृश्न मित्र नामा राजा, ३२ विजयपुरका वासवदत्त राजा, ३३ सोगंधिक नगरीका अप्रतिहत नामा राजा, ३४ कनक॰

प्रियचंद्र राजा, ३५ महापुरका वलनामा राजा, ३६ सुघोस नगरका अर्जुन राजा, ३७ चंपाका दत्त राजा, ३८ साकेतपुरका मित्रनंदी राजा ३९ इत्यादि अन्यत्री कितनेक राजे श्री महावीरके न्नक्त थे, येह सर्व राजायोंके नाम अंगोपांग शास्त्रोंमें लिखे हुएहै.

प्र. ७७–जो जो नाम तुमने महावीर न्नगवंतके न्नक्त राजायोंके लिखेहै, बौधमतके शास्त्रोंमें तिनको सर्व राजायोंकों बौद्धमति लिखाहै, तिसका क्या कारणहै·

उ.–जितने राजे श्रीमहावीर न्नगवंतके न्नक्त थे, तिन सर्वकों बौधशास्त्रोंमें बौधमति अर्थात् बुधके न्नक्त नहि लिखेहै, परंतु कितनेक राजायोंका नाम लिखाहै, तिसका कारणतो ऐसा मालुम होताहैकि पहिलें तिन राजायोंने बुधका उपदेश सुनके बुधके मतकों माना होवेगा, पीछे श्रीमहावीर न्नगवंतका उपदेश सुनके जैनधर्ममें आये मालुम होते है, क्योंकि श्रीमहावीर न्नगवंतसें १६ वर्ष पहिलें गौतम बुधने काल करा,

अर्थात् गौतम बुधके मरण पीछे श्रीमहावीरस्वामी १६ वर्ष तक केवलज्ञानी विचरे थे तिनके उपदेशसें कितनेक बौद्ध राजायोंने जैन धर्म अंगीकार करा, इस वास्ते कितनेक राजायोंका नाम दोनो मतोंमें लिखा मालुम होताहै.

प्र. ७८—क्या महावीर स्वामीसें पहिलां भरतखंडमें जैनधर्म नही था ?

उ.—श्रीमहावीर स्वामीसें पहिलां भरतखंडमें जैनधर्म बहुत कालसें चला आता था, जिस समयमें गौतम बुधने बुध होनेका दावा करा, और अपना धर्म चलाया था, तिस समयमें श्री पार्श्वनाथ २३ मे तीर्थंकरका शासन चला था, तिनके केशी कुमार नामे आचार्य पांचसो ५०० साधुयोंके साथ विचरते थे, और केशी कुमारजी गृहवासमें उज्जयिनिका राजा जयसेन और तिसकी पट्टराणी अनंगसुंदरी नामा तिनके पुत्र थे, विदेशि नामा आचार्यके पास कुमार ब्रह्मचारीने दीक्षा लीनो, इस वास्ते केशी कुमा कहे जातेहै, श्री पार्श्वनाथके बडे शिष्य श्री

न्नदत्तजी गणधर १ तिनके पट्ट ऊपर श्री हरिद-त्ताचार्य २, तिनके पट्ट ऊपर श्री आर्यसमुद्र ३, तिनके पट्ट ऊपर श्री केशी कुमारजी हुए है, जिनोंने स्वेतंबिका नगरीका नास्तिकमति प्रदेशी नामा राजेकों प्रतिबोधके जैनधर्मी करा, और श्रीमहावीरजीके बमे शिष्य इंद्रजूति गौतमके साथ श्रावस्ति नगरीमें श्री केशी कुमार मिले तहां गौतम स्वामीके साथ प्रश्नोत्तर करके शि-ष्योंका संशय दूर करके श्री महावीरका शासन अंगीकार करा तथा श्रीपार्श्वनाथजीके संतानो-मेंसे कालिक पुत्र १ मैथिल २ आनंदरक्षित ३ काश्यप ४ ये नामके चार स्थिविर पांचसौ सा-धुयोंके साथ तुंगिका नगरीमें आये तिस समयमें श्री महावीर न्नगवंत इंद्रजूति गौतमादि साधु-योंके साथ राजगृह नगरमें विराजमान थे, तथा साकेतपुरका चंद्रपाल राजा तिसकी कलासवेश्या नामा राणी तिनका पुत्र कलासवैशिक नामे ति-सने श्री पार्श्वनाथके संतानीये श्रीस्वयंप्रन्नाचा-र्यके शिष्य वैकुंठाचार्यके पास दीक्षा लीनी. पीछे

राजगृहनगरमें श्रीमहावीरके स्थविरोसें चर्चा क-रके श्री महावीरका शासन अंगीकार करा. इसी तरे पार्श्वसंतानीये गंगेय मुनि तथा उदकपेढाल पुत्र मुनिने श्रीमहावीरका शासन अंगीकार करा. इन पुर्वोक्त आचार्योंके समयमे वैशालि नगरीका राजा चेटकादि और क्षत्रियकुंडनगरके न्यातवंशी काश्यप गोत्री सिद्धार्थ राजादि श्रावक थे, और त्रिसलादि श्राविकायो थी. बुधधर्मके पुस्तकमें विशालि नगरीके राजाकों बुध के समयमें पा-र्श्वधर्मके मानने वाला अर्थात् जैनधर्मके मानने वाला लिखाहै, और बुधधर्मके पुस्तकमें ऐसाभी लिखाहैकि एक जैनधर्मी वडे पुरुषकों बुधने अ-पने उपदेशसें बौद्ध धर्मी करा, इस वास्ते श्रीम-हावीरसें पहिलां जैनधर्म भरतखंडमें श्रीपार्श्वना-थके शासनसें चलता था.

प्र. ७९–श्रीमहावीरजीसें पहिले तेवीसमें तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथजी हुए हैं. इस कथनमें क्या प्रमाण है.

उ.–श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आजपर्यंत श्री

पार्श्वनाथकी पट्ट परंपरायमें ८३ तेरासी आचार्य हुए है. तिनमेंसें सर्वसें पिछला सिद्ध सूरि नामे आचार्य सांप्रति कालमें मारवाड़में विचरेहै, हमने अपनी आंखोसें देखाहै, जिसकी पट्टावलि आज पर्यंत विद्यमान है, तिस पार्श्वनाथजीके होनेमे यही प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाण बलवंतहै.

प्र. ८०–कौन जाने किसी धूर्त्तनें अपनी कल्पनासें श्रीपार्श्वनाथ और तिनकी पट्ट परंपराय लिख दीनी होवेगी, इससे हमकों क्योंकर श्री पार्श्वनाथ हुए निश्चित होवें ?

उ.–जिन जिन आचार्योंके नाम श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आज तक लिखे हुए है, तिनोमेंसें कितनेक आचार्योंने जो जो काम करेहै वे प्रत्यक्ष देखनेमें आते है जैसें श्री पार्श्वनाथजीसें छठे ६ पट्ट ऊपर श्री रत्नप्रभ सूरिजीने वीरात् ७० वर्ष पीछे उपकेश पट्टनमें श्री महावीर स्वामीकी प्रतिष्ठा करी सो मंदिर और प्रतिमा आज तक विद्यमान है, तथा अयरणपुरकी छावनीसें ६ कोसके लगभग कोरंटनामा नगर उजाड़ पड़ा है,

जिस जगो कोरटा नामें आजके कालमें गाम वसता है. तहांभी श्रीमहावीरजोकी प्रतिमा मंदिरकी श्रीरत्नप्रभ सूरिजीकी प्रतिष्ठा करी हुइ अब विद्यमान कालमें सो मंदिर खमा है, तथा उसवाल और श्रीमालि जो वणिये लोकोंमें श्रावक ज्ञाति प्रसिद्ध है, वेभी प्रथम श्रीरत्नप्रभ सूरिजोनेही स्थापन करीहै, तथा श्रोपार्श्वनाथजीसें १७, सत्तरमें पट्ट ऊपर श्री यक्षदेव सूरि हुए हैं, वोरात् ५८५ वर्षे जिनोनें बारा वर्षीय कालमें वज्रस्वामीके शिष्य वज्रसेनके परलोक हुए पीछे तिनके चार मुख्य शिष्य जिनकों वज्रसेनजीने सोपारक पट्टणमें दीक्षा दीनी थी, तिनके नामसे चार शाखा तथा कुल स्थापन करे, वे येहैं; नागेंद्र १, चंद्र २, निवृत्त ३ विद्याधर ४. यह चारों कुल जैन मतमें प्रसिद्धहै; तिनमेंसें नागेंद्र कुलमें उदयप्रभ मल्लिषेणसूरि प्रमुख और चंद्रकुलमें बम गछ, तप गछ, खरतर गछ, पूर्णवल्लीय गछ, देवचंद्रसूरि कुमारपालका प्रतिबोधक श्रीहेमचंद्रसूरि प्रमुख आचार्य हुए है. तथा निवृत्तकुलमें श्री

शीलांकाचार्य श्रीद्रोणसूरि प्रमुख आचार्य हुए है, तथा विद्याधरकुलमें १४४४ ग्रंथका कर्त्ता श्रीहरिभद्रसूरि प्रमुखाचार्य हुए है, तथा मैं इसग्रंथका लिखनेवाला चंद्रकुलमें हुं; तथा पैंतीसमें पट्ट उपर श्रीदेवगुप्तसूरिजी हुए है. जिनोंके समीपे श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमणजीने पूर्व २ दो पढे थे, तथा श्री पार्श्वनाथजीके ४३ मे पट्ट ऊपर श्री कक्कसूरि पंच प्रमाण ग्रंथके कर्त्ता हुएहै, सो ग्रंथ विद्यमानहै तथा ४४ मे पट्ट ऊपर श्रीदेवगुप्तसूरिजी विक्रमात् १०७२ वर्षे नवपद प्रकरणके करता हुए है, सोभी ग्रंथ विद्यमानहै; तथा श्रीमहावीरजीकी परंपराय वाले आचार्योंने अपने बनाए कितनेक ग्रंथोमें प्रगट लिखाहैकि, जो उपकेश गच्छहै सो पट्ट परंपरायसें श्रीपार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरसें अविछिन्न चला आताहै; जब जिन आचार्योंकी प्रतिमा मंदिरकी प्रतिष्ठा करी हुइ और ग्रंथ रचे हुए विद्यमान है तो फेर तिनके होनेमें जो पुरुष शंसय करताहै तिसकों, अपने पिता, पितामह, प्रपितामह आदिकी वंशपरंपरायमेंभी

शंसय करनां चाहिये, जैसे क्या जाने मेरी सा-
तमी पेढीका पुरुष आगे हुआहैके नही. इस त-
रेंका जो संशय कोइ विवेक विकल करे तिसकों
सर्व बुद्धिमान् उन्मत्त कहेंगे. इसी तरें श्रीपार्श्व-
नाथकी पट्ट परंपरायके विद्यमान जो पुरुष श्री
पार्श्वनाथ २३ तेवीसमें तीर्थंकरके होनेमे नही
करे अथवा संशय करे तिसकोंभी प्रेक्षावंत पुरुष
उन्मत्तोंही पंक्तिमे समझते है, तथा धूर्त्त पुरुष
जो काम करताहै सो अपने किसी संसारिक सु-
खके वास्ते करता है. परंतु सर्व संसारिक इंद्रिय
जन्य सुखसे रहित केवल महा कष्ट रूप परंपराय
नही चला सक्ताहै, इस वास्ते जैनधर्मका संप्र-
दाय धूर्त्तका चलया हुआ नही, किंतु अष्टादश दू-
षण रहित अर्हंतका चलाया हुआहै.

प्र. ८१ कितनेक यूरोपीअन पंडित प्रोफे-
सर ए. वेवर साहिवादि मनमे ऐसी कल्पना क-
रतेहैं कि जैन मतकी रीती बुध धर्मके पुस्तकोंके
अनुसारे खडी करीहै, प्रोफेसर वेवर ऐसेंभी मा-
नतेहै कि, बौध धर्मके कितने साधु बुधकों नाक-,

वूल करके वुधके एक प्रतिपक्षीके अर्थात् महा-
वीरके शिष्यवनें और एक वार्त्ता नवीन जोमके
जैनमत नामे मत खमा करा, इस कथनकों आप
सत्य मानते होके नहीं ?

उ.—इस कथनकों हम सत्य नहीं मानते
है; क्यों कि प्रोफेसर जेकोवीने आचारंग और क-
ल्पसूत्रके अपने करे हुए इंग्लीश नापांतरकी उ-
पयोगी प्रस्तावनामें प्रोफसर ए. वेवर और मी०
ए. वार्थकी पूर्वोक्त कल्पनाकों जूगे दिखाइहै;
और प्रोफेसर जेकोवीने यह सिद्धांत अंतमे वता-
याहै कि जैनमतके प्रतिपक्षीयोंनें जैन मतके
सिद्धांत शास्त्रों ऊपर नरोंसा रखनां चाहिये, कि
इनमें जो कथनहै सो मानने लायकहै. विशेष
देखनां होवेतो माक्तर वूलरसाहिव कृत जैन दंत
कथाकी सत्यता वास्ते एक पुस्तकका अंतर हि-
स्सा नागहै, सो देख लेनां. हमवी अपनी वुद्धिके
अनुसारें इस प्रश्नका उत्तर लिखते है. हम ऊपर
जैनमतकी व्यवस्था श्रीपार्श्वनाथजीसें लेके आज
तक लिख आएहै, तिससें प्रोफेसर ए. वेवरका

पूर्वोक्त अनुमान सत्य नही सिद्ध होताहै. जेकर कदाचित् बौध मतके मूल पिडग ग्रंथोमें ऐसा लेख लिखा हुआ होवेकि, बुधके कितनेक शिष्य बुधको नाकबूल करके बुधके प्रतिपक्षी निर्ग्रंथोके सिरदार न्दात्त पुत्रके शिष्य बने; तिनोंने बुधके समान नवीन कल्पना करके जैनमत चलायाहै. जेकर ऐसा लेख होवे तबतो हमकोबी जैनमतकी सत्यता विषे संशय उत्पन्न होवे, तबतो हमभी प्रोफेसर ए. वेबरके अनुमानकी तर्फ ध्यान देवें; परंतु ऐसा लेख जुग बुधके पुस्तकोंमे नही है क्योंकि बुधके समयमे श्रीपार्श्वनाथजीके हजारों साधु विद्यमानथे तिनके होते हुए ऐसा पुर्वोक्त लेख कैसें लिखा जावे, बलके जैन पुस्तकोंमेंतो बुधकी बाबत बहुत लेखहै श्रीआचारंगकी टीकामें ऐसा लेखहै. मौद्गलिस्वातिपुत्राभ्यां शौद्धोदनिं ध्वजीकृत्य प्रकाशितः अस्यार्थ ॥ माद्गलिपुत्र अर्थात् मौद्गलायन और स्वातिपुत्र अर्थात् सारीपुत्र दोनोंने शुद्धोदनके पुत्रको ध्वजीकृत्य अर्थात् ध्वजाकी तरें सर्व मताध्यक्षोंसें अधिक ऊंचा सर्वोत्तम रूप

करके प्रकाश्याहै. आचारंगके लेख लिखनेवालेका यह अभिप्रायहै कि शुद्धोदनका पुत्र सर्वज्ञ अतिशयमान् पुरुष नही था, परंतु इन दोनों शिष्योंनें अपनी कल्पनासें सर्वसें उत्तम प्रकाशित करा, इस वास्ते बौद्धमत स्वरूचिसें बनायाहै; तथा श्री आचारंगजोकी टीकामें एक लेख ऐसाभी लिखा है, तच्चनिकोपासकोनेंदबलात्, बुद्धोत्पत्ति कथानकात् द्वेषमुपगच्छेत्. अर्थ बुधका उपासक आनंद तिसकी बुद्धिके बलसें बुधकी उत्पत्ति हूइहै, जेकर यह कथा सत्यसत्य पर्षदामें कथन करोये तो बौद्धमतके मानने वालोंकों सुनके द्वेष उत्पन्न होवे, इस वास्ते जिस कथाके सुननेसें श्रोताकों द्वेष उत्पन होवे तैसी कथा जैनमुनि परिषदामें न कथन करे, इस लेखसें यह आशय हैकि बुधकी उत्पतिरूप सच्ची कथा बुधकी सर्वज्ञता और अति उत्तमता और सत्यता और तिसकी कल्पित कथाकी विरोधनीहै, नहीतो तिसके भक्तोंकों द्वेष क्यों कर उत्पन्न होवे, इस वास्ते जैन मत इस अवसर्पिणिमे श्री ऋषभदेवजीसें

लेकर श्रीमहावीर पर्यंत चौवीस तीर्थंकरोंका चलाया हुआ चलताहै परंतु कल्पित नहीहै.

प्र. ८१–बुद्धकी उत्पतिकी कथा आपने किसी स्वेतांबरमतके पुस्तकोमें वांचीहै ?

उ.–स्वेतांबरमतके पुस्तकोमेंतो जितना बुधकी बावत कथन हमने श्री आचारंगजीकी टीकामें देखा वांचाहै तितनातो हमने ऊपरके प्रश्नमें लिख दीयाहै, परंतु जैनमतकी दुसरी शाखा जो दिगंबरमतकीहै तिसमे एक देवसेनाचार्यने अपने रचे हूए दर्शनसार नामक ग्रंथमे बुधकी उत्पत्ति इस रीतीसें लिखीहै. गाथा ॥ सिरि पासणाह तित्थे ॥ सरऊ तीरे पलासणयर त्थे ॥ पिहि आसवस्स सीहे ॥ महा लुदो बुद्धकित्ति मुणी ॥१॥ तिमिपूरणासणेया ॥ अहिगयपवज्जावऊपरमन्नठे ॥ रत्तंवरंधरित्ता ॥ पवढ्ढियतेणएयत्तं ॥२॥ मंसस्सनत्थिजीवो जहाफलेदहियदुद्धसक्केराए ॥ तम्हातंमुणित्ता न्नरकंतोणत्थिपाविठो॥३॥ मज्जंणवज्जणिज्जं ॥ दव्वदवंऊहजलंतदएदं ॥ इति लोएघोसिता पवत्तियंसंघसावज्जं ॥४॥ आगोकरे

दिकम्मं ॥ अणोतंत्तुं जदीदिसिद्धंतं ॥ परिकप्पिक-णणूणं ॥ वसिकिच्चाणिरयमुववस्रो ॥५॥ इति इ-नकी ग्गापा अथ वौद्धमतकी उत्पत्ति लिखते है. श्री पार्श्वनाथके तीर्थमें सरयू नदीके कांठे ऊपर पलासनामे नगरमें रहा हुआ, पिहिताश्रव नामा मुनिका शिष्य वुद्धकीर्ति जिसका नाम था, ए-कदा समय सरयू नदीमें वहुत पानीका पूर चढि आया तिस नदीके प्रवाहमें अनेक मरे हुए मछ वहते हुए कांठे ऊपर आ लगे, तिनको देखके तिस वुद्धकीर्त्तिने अपने मनमें ऐसा निश्चय क-राकि स्वतः अपने आप जो जीव मर जावे ति-सके मांस खानेमे क्या पापहै, तव तिसने अंगो-कार करी हुइ प्रवज्याव्रत रूप गेरू दीनी, अर्थात् पूर्व अंगीकार करे हुए धर्मसें भ्रष्ट होके मांस भक्षण करा. और लोकोंके आगे ऐसा अनुमान कथन कराकी मांसमें जीव नही है, इस वास्ते इसके खानेमें पाप नही लगताहै. फल, दुध, दहिं तरें तथा मदीरा पीनेमेंभी पाप नहीहै. ढीला द्रव्य होनेसें जलवत्. इस तरेंकी प्ररूपणा करके

तिसने बौद्धमत चलाया, और यहभी कथन करा के सर्व पदार्थ क्षणिकहै, इस वास्ते पाप पुन्यका कर्त्ता अन्यहै, और भोक्ता अन्यहै. यह सिद्धांत कथन करा बौद्धमतके पुस्तकोमें ऐसाभी लेखहै कि, बुधका एक देवदत्तनामा शिष्य था, तिसने बुधके साथ बुधकों मांस खाना छुडानेके वास्ते वहुत झगडा करा, तोभी शाक्यमुनि बुधनें मांस खाना न छोडा, तव देवदत्तने बुधकों छोड दीया, जब बुधने काल करा था, तिस दिनभी चंदनामा सोनीके घरसें चावलोंके वीच सूयरका मांस रांधा हुआ खाके मरणको प्राप्त हुआ. यह कथनभी बुधमतके पुस्तकोंमें है; और स्वेतांबराचार्य साढे- तीन करोड नवीन श्लोकोंका कर्त्ता श्री हेमचंद्रसूरिजीने अपने रचे हूए योगशास्त्रके दूसरे प्रकाशकी वृत्तिमें यह श्लोक लिखाहै । स्वजन्मकाल एवात्म, जनन्युदरदारिणः मांसोपदेशदातुश्च, कथंशौद्धोदनेर्दया ॥११॥ अर्थ । अपने जन्म कालमें ही अपनी माता मायाका जिसनें उदर विदारण करा, तिसके, और मांस खानेके उपदेशके देने-

वाले शुद्धोदनके पुत्रके दया कहांसे थी, अपितु नही थी. इस ऊपरके श्लोकसें यह आशय निकलताहै कि जब बुध गर्भमें था, तब तिसके सबबसें इसकी माताका उदर फट गयाथा, अथवा उदर विदारके इसकों गर्भमेंसें निकाला होवेगा. चाहो कोइ निमित्त मिला होवे, परंतु इनकी माता इनके जन्म देनेसें तत्काल मरगइ थी. तत्काल मरणांतो इनकी माताका बुद्ध धर्मके पुस्तकोमेंभी लिखाहै. और बुद्ध मांसाहार गृहस्थावस्थामेंभी करता होवेगा, नहीतो मरणांत तकभी मांसके खानेसें इसका चित्त तृप्तही न हूआ ऐसा बौद्धमतके पुस्तकोंसेंही सिद्ध होताहै. इस वास्तेही बौद्धमतके साधु मांस खानेमे घृणा नही करतेहै, और वेखटके आज तक मांस भक्षण करे जाते है; परंतु कच्चे मांसमें अनगिनत कृमि समान जीव उत्पन्न होतेहै, वे जीव बुधकों अपने ज्ञानसें नही दीखेहै; इस वास्तेही बुध मतके उपासक गृहस्थ लोक अनेक कृमि संयुक्त मांसकों रांधतेहै और खाते है. इस मतमें मांस खानेका निषेध नहीहै,

इस वास्तेही मांसाहारी देशोंमें यह मत चलताहै.

प्र.७३—श्रीमहावीरजी छद्मस्थ कितने काल तकरहे और केवली कितने वर्ष रहे?

उ.—बारां वर्ष १२ व ६ मास १५ पंदरा दिन छद्मस्थ रहे, और तीस वर्ष केवली रहेहे.

प्र. ७४—जगवंतने छद्मस्थावस्थामें किस किस जगे चौमासे करे, और केवली हुए पीछे किस किस जगे चौमासे करे थे?

उ.—अस्थि ग्राममें १, दूसरा राजगृहमें, २, तीसरा चंपामे ३, चौथा पृष्ट चंपामें ४, पांचमा जाद्रिकामे ५, छठा जाद्रिकामें ६, सातमा आलंजियामे ७, आठमा राजगृहमे ८, नवमा अनार्यदेशमे ९, दशमा सावत्थिमे १०, इग्यारमा विशालामे ११, बारमा चंपामे १२, येह १२ छद्मस्थावस्थाके चौमासे करे केवली हुए. पीछे १२ राजगृहमें ११ विशालामें ६ मिथलामें १ पावापुरीमें एवं सर्व ३० हुए.

प्र.७५—श्रीमहावीरस्वामीका निर्वाण किस जगें और कब हुआ था?

उ.–पावापुरी नगरीके हस्तिपाल राजाकी दफतर लिखनेकी सन्नामें निर्वाण हुआथा, और विक्रमसें ४७० वर्ष पहिलें और संप्रति कालके १एधएके सालसें २४१एवर्ष पहिलें निर्वाण हुआथा.

प्र ८६–जिस दिन न्नगवंतका निर्वाण हुआ था सो कोनसा दिन वा रात्रिथी ?

उ.–न्नगवंतका निर्वाण कार्त्तिक वदि अमावस्याकी रात्रिके अंतमें हुआथा.

प्र. ८७–तिस दिन रात्रिकी यादगीरी वास्ते कोइ पर्व हिंदुस्थानमे चलताहै वा नही ?

उ.–हिंडु लोकमें जो दिवालीका पर्व चलताहै, सो श्री महावीरके निर्वाणके निमत्तसेंही चलताहै.

प्र. ८८–दिवालिकी उत्पत्ति श्री महावीरके निर्वाणसें किसतरें प्रचालित हुइहै ?

उ.–जिस रात्रिमें श्रीमहावीरका निर्वाण हुआ था, तिस रात्रिमें नव मल्लिक जातिके राजे और नव लेच्छकी जातिके राजे जो चेटक महाराजाके सामंत थे, तिनोंने तहां उपवास रूप

पोषध करा था, जब ज्ञगवंतका निर्वाण हूआ, तब तिन अगरहही राजायोंने कहाकि इस ज्ञरतखंमसें ज्ञाव उद्योत तो गया, तिसकी नकलरूप हम इव्यो द्योत करेंगे, तब तिन राजायोंनें दीपक करे, तिस दिनसें लेकर यह दीपोत्सव प्रवृत्त हुआ है. यह कथन कल्पसूत्रके मूल पाठमें है. जो अन्य मत वाले दिवालीका निमित्त कथन करतेहै, सो कल्पितहै क्योंकि किसि मतके ज्ञी मुख्य शास्त्रमें इस पर्वकी उत्पत्तिका कथन नहीहै.

प्र. ८ए—ज्ञगवंतके निर्वाण होनेके समयमें शक्रइंद्रे आयु वधावनेके वास्तें क्या विनती करी थी, और ज्ञगवंत श्री महावीरजीयें क्या उत्तर दीनाथा?

उ.—शक्रइंद्रे यह विनती करीथी के, हे स्वामि एक क्षणमात्र अपना आयु तुम वधावो, क्योंकि तुमारे एक क्षणमात्र अधिक जीवनेंसें तुमारे जन्म नक्षत्रोपरि ज्ञस्म राशिनामा तीस ३० मा ग्रह आया है, सो तुमारे शासनकों

नही दे सकेगा, तब ज्ञगवंतने ऐसे कहाके हे इंद्र, यह पीछे कदइ हूआ नही, और होवेगाज्ञी नही कि कोइ आयु वधा सके; और जो मेरे शासनको पीमा होवेगी सो अवश्य होनहार है, कदापि नही टलेगी.

प्र. ए०–तवतो कोइज्ञी देह धारी आयु नही वधा सक्ताहे यह सिद्ध हूआ ?

उ.–हां, कोइज्ञी क्षणमात्र आयु अधिक नही वधा सक्ता है.

प्र. ए१–कितनेक मतावलंबी कहतेहै कि योगाभ्यासादिके करनेसें आयु वध जाताहै, यह कथन सत्यहे वा नही ?

उ.–यह निकेवल अपनी महत्वता वधाने वास्ते लोकों गप्पे ठोकतेहै, क्योंकि चौवीस तीर्थंकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश, पातंजली, व्यास, ईशामसीह, महम्मद प्रमुख जे जगतमें मतचलाने वाले सामर्थ पुरुष गिने जातेहै, वेज्ञी आयु नही वधा सकेहै, तो फेर सामान्य जीवोंमें तो क्य शक्तिहे के आयु वधा सके; जेकर किसीने वधाइ

होवे तो अब तक जीता क्यों नही रहा.

प्र. ९२—जगवंतका जाइ नंदिवर्द्धन, और जगवंतकी संसारावस्थाकी यशोदा स्त्री और जगवंतकी बेटी प्रियदर्शना, और जगवंतका जमाइ जमाली, इनका क्या वर्त्तंत हूआ था?

उ.—नंदीवर्द्धन राजातो श्रावक धर्म पालता रहा, और यशोदाजी श्राविका तो थी, परंतु यशोदाने दीक्षा लीनी मैंने किसी शास्त्रमें नही वांचाहै. और जगवंतकी पुत्रीने एक हजार स्त्रीयोंके साथ और जमाइ जमालिने ५०० पांचसौ पुरुषोंके साथ जगवंत श्री महावीरजीके पास दीक्षा लीनीथी.

प्र. ९३—श्रीमहावीर जगवंतने जो अंतमें सोलां पोहर तक देशना दीनीथी, तिसमे क्या क्या उपदेश कराथा?

उ.—जगवंतने सर्वसें अंतकी देशनामें ५५ पचपन अशुज कर्मोंके जैसें जीव जवांतरमे फल जोगतेहै, ऐसे अध्ययन और पचपन ५५ शुज कर्मोंके जैसें भवांतरमें जीव फल जोगतेहै, ऐसे

अध्ययन और छत्तीस ३६ विना पूछ्यां प्रश्नोंके उत्तर कथन करके पीछे ५५, पचपन शुभ वि-पाक फल नामे अध्ययनोंमेंसें एक प्रधान नामे अध्ययन कथन करते हुए निर्वाण प्राप्त हुए थे. यह कथन संदेह विषौषधी नामे ताड पत्रोपर लिखी हुइ पुरानी कल्पसूत्रकी टीकामे है. येह सर्वाध्ययन श्री सुधर्मस्वामीजीने सूत्ररूप गूंथे होवेंगे के नही, ऐसा लेख मेरे देखनेमें किसी शास्त्रमें नही आया है.

प्र. ७४–जैनमतमे यह जो रूढिसें कितनेक लोक कहते है कि श्री उत्तराध्ययनजीके छत्तीस अध्ययन दिवालीकी रात्रिमें कथन करके ३७ सैंतीसमा अध्ययन कथन करते हुएमोक्षगये, यह कथन सत्य है, वा नही?

उ.–यह कथन सत्य नही, क्योंकि कल्प सूत्रकी मूल टीकासें विरुद्धहै, और श्री भद्रबाहुस्वामीने उत्तराध्ययनकी निर्युक्तिमें ऐसा कथन कराहै कि उत्तराध्ययनका दूसरा परीषहाध्ययनतो कर्मप्रवाद पूर्वके १७ सत्तरमें पाहुडसें उद्धार क-

रके रचाहै, और आठमाध्ययन श्री कपिल केवलीने रचाहै, और दशमाध्ययन जब गौतमस्वामी अष्टापदसें पीछे आएहै, तब जगवंतने गौतमको धीर्य देने वास्ते चंपानगरीमें कथन करा था, और २३ मा अध्ययन केशीगौतमके प्रश्नोत्तर रूप शिश्यवरोने रचाहै. कितने अध्ययन प्रत्येकबुद्धि मुनियोके रचे हुएहै. और कितनेक जिन जाषित है. इस वास्ते उत्तराध्ययन दिवालीकी रात्रिमे कथन करासिद्ध नही होताहै.

प्र. एए—निर्वाण शब्दका क्या अर्थ है ?

उ.—सर्व कर्म जन्य उपाधि रूप अग्निका जो बुऊ जाना तिसकों निर्वाण कहते है, अर्थात् सर्वोपाधिसें रहित केवल, शुद्ध, बुद्ध सच्चिदानंद रूप जो आत्माका स्वरूप प्रगट होना, तिसकों निर्वाण कहते है.

प्र. एद—जीवकों निर्वाण पद कब प्राप्त होताहै ?

उ. जब शुनाशुन सर्व कर्म जीवके नष्ट हो जातेहै तब जीवको निर्वाणपद प्राप्त होताहै.

प्र. ए७–निर्वाण हूआ पीछे आत्मा कहा जाता है, और कहां रहताहै ?

उ.–निर्वाण हूआ पीछे आत्मा लोकके अग्र भागमे जाताहै, और सादिअनंत काल तक सदा तहांही रहताहै.

प्र. ए८–कर्म रहित आत्माकों लोकाग्रमें कौन ले जाताहै ?

उ.–आत्मामें ऊर्ध्वगमन स्वभावहै, तिससें आत्मा लोकाग्र तक जाताहै.

प्र. एए–आत्मा लोकाग्रसें आगे क्यों नही जाताहै ?

उ.–आत्मामें ऊर्ध्वगमन स्वभाव तो है, परंतु चलनेमे गति साहायक धर्मास्तिकाय लोकाग्रसें आगे नहीहै, इस वास्ते नही जाताहै. जैसें मछमे तरनेकी शक्तितो है, परंतु जल विना नही तरसक्ताहै, तैसें मुक्तात्माभी जानना.

प्र. १००–सर्व जीव किसी कालमें निर्वाण पद पावेंगे के नही ?

उ.–सर्व जीव निर्वाण पद किसी कालमें

न्नी नही पावेंगे.

प्र. १०१–क्या सर्व जीव एक सरीखे नही है, जिससें सर्व जोव निर्वाण पद नही पावेगें.

उ.–जीव दो तरे के है; एक न्नव्य जीवहै १, दुसरे अन्नव्य जीवहे; तिनमें जो अन्नव्य जीव होवेतो कदेन्नी निर्वाण पदकों प्राप्त नही होवेगें, क्योंकि तिनमे अनादि स्वन्नावसेंही निर्वाण पद प्राप्त होनेकी योग्यताही नही है; और जो न्नव्य जीवहै तिनमें निर्वाणपद पावनेकी योग्यता तो है, परंतु जिस जिसकों निर्वाण होनेके निमित्त मिलेंगे वे निर्वाणपद पावेंगे, अन्य नही.

प्र. १०२–सदा जीवांके मोक्ष जानेसें किसी कालमें सर्व जीव मोक्षपद पावेंगे, तवतो संसारमें अन्नव्य जीवही रह जावेंगे, और मोक्ष मार्ग वंद हो जावेगा ?

उ.–न्नव्य जीवांकी राशि सर्व आकाशके प्रदेशोंकी तरे अनंत तथा अनागत कालके समयकी तरें अनंतहै कितनाही काल व्यतीत होवे तोन्नी अनागत कालका अंत नही ।ता—

तरें सदा मोक्ष जानेसें जीवसी खूटते नहीहै.
इस लोकमें निगोद जीवांके असंख्य शरीरहै, एकैक शरीरमें अनंत अनंत जीवहै; एक शरीरमें जितने अनंत अनंत जीवहे, तिनमेंसे अनंतमे भाग प्रमाण जीवअतीत कालमें मोक्षपद पायेहै, और तिनमेंसे अनंतमें भाग प्रमाण अनंत जीव अनागत कालमें मोक्ष पद पावेंगे, इस वास्ते मोक्ष मार्ग वंद नही होवेगा.

प्र. १०३–आत्मा अमरहैके नाशवंतहै?

उ.–आत्मा सदा अविनाशी है, सर्वथा नाशवंत नही है.

प्र. १०४–आत्मा अमर है, अविनाशी है, इस कथनमें क्या प्रमाण है?

उ.—जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै, सो नाशवंत होताहै, परंतु आत्माकी उत्पत्ति नही हुइहै, क्योंकि जिस वस्तुकी उत्पत्ति होतीहै तिसका उपादान अर्थात् जिसकी आत्मा वन जावे जैसें घमेका उपादान मिट्टीका पिंम है, सो उपादान कारण कोइ अरूपी ज्ञानवंत वस्तु होनी

चाहिये, जिससें आत्मा बने, ऐसा तो आत्मासें पहिलां कोइभी उपादान कारण नहीहै; इस वास्ते आत्मा अनादि अनंत अविनाशी वस्तु है.

प्र. १०५–जेकर कोइ ऐसे कहे आत्माका उपादान कारण ईश्वरहै, तबतो तुम आत्माकों अनित्य मानोगेके नही.

उ.–जब ईश्वर आत्माका उपादान कारण मानोगे, तबतो ईश्वर और सर्व अनंत संसारी आत्मा एकही हो जावेगी, क्योंकि कार्य अपणे उपादान कारणसें भिन्न नही होता है.

प्र. १०६–ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगेतो इसमे क्या हानि है?

उ.–ईश्वर और सर्व संसारी आत्मा एकही सिद्ध होवेगे तो नरक तिर्यंचकी गतिमेभी ईश्वरही जावेगा, और धर्मा धर्मभी सर्व ईश्वरही करनेवाला और चौर, यार, लुचा, लफंगा, अगम्यगामी इत्यादि सर्व कामका कर्त्ता ईश्वरही सिद्ध होवेगा, तबतो वेदपुराण, बैबल, कुरान प्रमुख शास्त्रभी ईश्वरने अपनेही प्रतिबोध वास्ते

सिद्ध होवेंगे, तवतो ईश्वर अज्ञानी सिद्ध होवेगा. जब अज्ञानी सिद्ध हुआ तवतो तिसके रचे शास्त्रभी जूठे और निष्फल सिद्ध होवेंगे, ऐसे जब सिद्ध होगा तवतो माता, वहिन, वेटीके गमन करनेकी शंका नही रेहगी, जिसके मनमें जो आवे सो पाप करेगा, क्योंके सर्व कुछ करने कराने फल जोगने जुक्ताने वाला सर्व ईश्वरही है, ऐस माननेसे तो जगतमे नास्तिक मत खमा करना सिद्ध होवेगा.

प्र. १०७—जीवकों पुनर्जन्म किस कारणसें करणा पमताहै ?

ज.—जीवहिंसा, १ जूठ वोलना, २ चौरी करनी, ३ मैथुन, स्त्रीसें जोगकरना, ४ परिग्रह रखना, ५ क्रोध ६ मान ७ माया ८ लोज ९ एवं ए राग १० द्वेष ११ कलह १२ अज्याख्यान अर्थात् किसीकों कलंक देना १३ पैशुन १४ परकी निंदा करनी १५ रति अरति १६ माया मृषा १७ मिथ्यादर्शन शल्य, अर्थात् कुदेव, कुगुरु, कुधर्म, इन तीनोको सुदेव, सुगुरु, सुधर्म करके

मानना १८, जब तक जीव येह अष्टादश पाप सेवन करताहै, तब तक इसकों पुनर्जन्म होताहै.

प्र. १०८–जीवकों पुनर्जन्म बंद होनेका क्या रस्ताहै ?

उ.–ऊपर लिखे हुए अष्टादश पापका त्याग करे, और पूर्व जन्मांतरोंमें इन अष्टादश पापोंके सेवनेसे जो कर्मोका बंध कराहै, तिसकों अर्हंतकी आज्ञानुसार ज्ञान श्रद्धा जप तप करनेसें सर्वथा नाश करे तो फेर पुनर्जन्म नही होताहै.

प्र. १०९–तीर्थंकर महाराजके प्रन्नावसें अपना कल्याण होवेगा, के अपनी आत्माके गुणाके प्रन्नावसें हमारा कल्याण होवेगा ?

उ.—अपनी आत्माका निज स्वरूप केवल ज्ञान दर्शनादि जब प्रगट होवेगे, तिसके प्रन्नावसें हमारी तुमारी मोक्ष होवेगी.

प्र. ११०—जेकर निज आत्माके गुणोंसे मोक्ष होवेगी, तबतो तीर्थंकर न्नगवंतकी न्नक्ति करनेका क्या प्रयोजन है ?

उ.–तीर्थंकर न्नगवंतकी न्नक्ति

र्थंकर भगवंत निमित्त कारणहै. विना निमित्तके अपनी आत्माके गुणरूप उपादान कारण कदेइ फल नही देताहै. तीर्थंकर निमित्तभूत होवे तव भक्तिरूप उपादान कारण प्रगट होताहै तिससेंही; आत्माके सर्व गुण प्रगट होतेहै, तिनसें मोक्ष होताहै. जैसे घट होनेमे मिट्टी उपादान कारनहै, परंतु विना कुलाल चक्र दंम चीवरादि निमित्तके कदापि घट नही होताहै, तैसेंही तीर्थंकर रूप निमित्त कारण विना आत्माकों मोक्ष नही होताहै, इस वास्ते तीर्थंकरकी भक्ति अवश्य करने योग्यहै.

प्र. ११२—जगतमें जीव पुन्य पाप करतेहै तिनके फलका देनेवाला परमेश्वरहै वा नही ?

उ.—पुन्य पापके फलका देनेवाला परमेश्वर नही है,

प्र. ११३—पुन्य पापके फलका दाता ईश्वर मानिये तो क्या हरज है ?

उ.—ईश्वर पुन्य पापका फल देवे तव तो ईश्वरकी ईश्वरताकों कलंक लगता है.

प्र. ११४–क्या कलंक लगताहै ?

उ.–अन्यायता, निर्दयता असमर्थता अज्ञानतादि.

प्र. ११५–अन्यायता दूषण ईश्वरकों पुन्य पापके फल देनेसें कैसें लगताहै ?

उ.–जब एक आदमीनें तलवारादिसें किसी पुरुषका मस्तक छेदा, तब मस्तकके छिदनेसें उस पुरुषकों जो महा पीमा जोगनी पमीहै, सो फल ईश्वरने दूसरे पुरुषके हाथसें उसका मस्तक कटवाके भुक्ताया, तद पीछे तिस मारने वालेकों फांसी आदिकसें मरवाके तिसकों तिस शिर छेदन रूप अपराधका फल भुक्ताया, ईश्वरनें पहिलां तिसका शिर कटवाया, पीछे तिसकों फांसी देके तिस शिर छेदनेका फल जुक्ताया; ऐसे काम करनेसें ईश्वर अन्यायी सिद्ध होताहै.

प्र, ११६--पुन्य पापके फल जुक्तानेसें ईश्वरमें निर्दयता क्यों कर सिद्ध होतीहै :

उ.–जब ईश्वर कितने जीवांकों महा दुखी करताहै, तब निर्दयी सिद्ध होताहै.

मैंतो ऐसें कहताहै किसी जीवकों मत मारना, दुखोन्नी न करनां, भूखेकों देखके खानेकों देनां, और आप पूर्वोक्त काम नही करताहै, जीवांकों मारताहै, महा दुखी करताहै. भूखसें लाखो क रोमो मनुष्य कालादिमें मर जातेहै, तिनकों खा नेकों नही देताहै, इस वास्ते निर्दयी सिद्ध हो-ताहै,

प्र. ११७–ईश्वरतो जिस जीवने जैसा जैसा पुन्य पाप कराहै तिसकों तैसा तैसा फल देता-है. इसमे ईश्वरकों कुछ दोष नही लगताहै, जैसें राजा चौरकों दंम देताहै और अच्छे काम करने वालेकों इनाम देताहै,

उ.--राजातो सर्व चोराकों चोरी करनेसें वंद नही कर सकता है. चाहतातोहै कि मेरे राज्यमें चोरी न होवेतो ठीकहै, परंतु ईश्वरकों तो लोक सर्व सामर्थ्यवाला कहतेहै, तो फेर ई-श्वर सर्व जीवांकों नवीन पाप करनेसे क्यों नही मनै करताहै. मनै न करनेसें ईश्वर जान वूझके जीवोसें पाप करताहै. फेर तिसका दंम देके जी

वोंकों डखी करताहै. इस हेतुसेंही अन्यायी, नि-र्दयी, असमर्थ ईश्वर सिद्ध होताहै. इस वास्ते ईश्वर भगवंत किसीकों पुन्य पापका फल नही देताहै. इस चर्चाका अधिक स्वरूप देखनां होवे तो हमारा रचा हुआ जैनतत्वादर्शनामा पुस्तक बांचनां.

प्र. ११८--जब ईश्वर पुन्य पापका फल नही देताहै, तो फेर पुन्य पापका फल क्योंकर जीवांको मिलताहै?

उ.--जब जीव पुन्य पाप करतेहै तब तिनके फल भोगनेके निमित्तभी साथही होनेवाले बनाता करताहै, तिन निमित्तो द्वारा जीव शुभाशुभ कर्मोका फल भोगतेहै, तिन निमित्तोका नामही अज्ञ लोकोने ईश्वर रख छोड़ाहै.

प्र ११९-जगतका कर्त्ता ईश्वरहै के नही?

उ.--जगततो प्रवाहसें अनादि चला आताहै. किसीका मूलमें रचा हुआ नहीहै. काल १ स्वभाव २ नियत ३ कर्म ४ चेतन आत्मा और जड पदार्थ इनके सर्व अनादि नियमें

यह जगत विचित्ररूप प्रवाहसें चला हुआ उत्पाद, व्यय ध्रुव रूपसें इसी तरे चला जायगा.

प्र. १२०--श्री महावीरस्वामीए तीर्थंकरोंको प्रतिमा पूजनेका उपदेश कराहै के नही ?

उ.–श्री महावीरजीने जिन प्रतिमाकी पूजा द्रव्ये और भावेतो गृहस्थकों करनी बतायिहै, और साधूयोंकों भावपूजा करनी बताइहै.

प्र. १२१—जिन प्रतिमाकी पूजा विना जिनकी भक्ति हो शक्तीहै के नही ?

उ.—प्रतिमा विना भगवंतका स्वरूप स्मरण नही हो सक्ताहै, इस वास्ते जिन प्रतिमा विना गृहस्थलोकोसे जिनराजकी भक्ति नही हो सक्तीहै.

प्र. १२२–जिन प्रतिमातो पाषाणादिककी बनी हुइहे, तिसके पूजने गुणस्तवन करनेसें क्या लाभ होताहै ?

उ.--हम पथ्थर जानके नही पूजतेहै, किंतु तिस प्रतिमा द्वारा साक्षात् तीर्थंकर भगवंतकी पूजा स्तुति करतेहैं. जैसे सुंदर स्त्रीकी तसवीर

देखनेसे असल स्त्रीका स्मरण होकर कामी काम पीड़ित होताहै तैसेही जिन प्रतिमाके देखनेसें भक्तजनोको असली तीर्थंकरका रूपका स्मरण होकर भक्तोंका जिन भक्तिसें कल्याण होता है.

प्र. १२३–जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा करनेसें श्रावकोंको पाप लगताहै के नही ?

उ.–जिन प्रतिमाकी फूलादिसें पूजा करनेसें संसारका क्षय करे, अर्थात् मोक्ष पद पावे; और जो किंचित् द्रव्य हिंसा होतीहै, सो कूपके दृष्टांतसें पूजाके फलसेही नष्ट होजातिहै, यह कथन आवश्यक सूत्रमेंहै.

प्र. १२४–सर्व देवते जैनधर्मी है ?

उ.–सर्व देवते जैनधर्मी नहीहै, कितनेकहै.

प्र. १२५–जैनधर्मी देवताकी भगती श्रावक साधु करे के नही ?

उ.–सम्यग् दृष्टी देवताकी स्तुति करनी जैनमतमें निषेध नही, क्योंकि श्रुत देवता ज्ञानके विघ्नोकों दुर करतेहै, सम्यग् दृष्टी देवते धर्ममे होते विघ्नोकों दुर करतेहै, और कोइ

जीव इस लोकार्थके वास्ते सम्यग् दृष्टि देवता-योंका आराधन करेतो तिसकाभी निषेध नहीं है, साधुभी सम्यग् दृष्टि देवताका आराधन स्तुति जैनधर्मकी उन्नति तथा विघ्न दुर करने वास्ते करेतो निषेध नहीं. यह कथन पंचाशकादि शास्त्रोंमे है.

प्र. १२६—सर्व जीव अपने करे हूए कर्मका फल भोगत है, तो फेर देव ते क्या कर सके है ?

उ—जैसें अशुभ निमित्तोंके मिले अशुभ कर्मका फल उदय होताहै, तैसे शुभ निमित्तोंके मिलनेसें अशुभ कर्मोदय नष्टभी हो जाताहै, इस वास्ते अशुभ कर्मोंके उदयकों दुर करनेमें देवताभी निमित्त है.

प्र. १२७—जैनधर्मी अथवा अन्यमति देवते विना कारण किसीकों दुख दे सक्ते है के नहीं ?

उ—जिस जीवके देवताके निमित्तसें अशुभ कर्मका उदय होताहै, तिसकों तो द्वेषादि

कारणसें देवते दुख दे सक्तेहै, अन्यको नही.

प्र. १९८–संप्रतिराजा कौन था ?

उ.–राजगृह नगरका राजा श्रेणिक जिसका दूसरा नाम भंभसार था, तिसकी गद्दी ऊपर तिसका बेटा अशोकचंद्र दूसरा नाम कोणिक बैठा, तिसने चंपानगरीकों अपनी राजधानी करी, तिसकै मरां पिछै तिसकी गद्दी ऊपर तिसका बेटा उदायि बैठा, तिसने अपनी राजधानी पाटलीपुत्र नगरमें करी सो उदायि विना पुत्रके मरण पाया; तिसकी गद्दी ऊपर नायिका पुत्र नंद बैठा, तिसकी नव पेढीयोने नंदही नामसें राज्य करा, वें नव नंद कहलाए. नवमें नंदकी गद्दी ऊपर मौर्यवंशी, चंद्रगुप्तराजा बैठा, तिसकी गद्दी ऊपर तिसका पुत्र बिंदुसार बैठा, तिसकी गद्दी ऊपर तिसका बेटा अशोकश्रीराजा बैठा, तिसका पुत्र कुणाल आंखासें अंधा था इस वास्ते तिसकों राज गद्दी नही मिली, तिस कुणालका पुत्र संप्रति हुआ, सो जिस दिन जन्म्याथा तिस दिनही तिसकों अशोकश्री

अपनी राजगद्दी ऊपर बैठाया, सो संप्रति नामे राजा हुआहै, श्रेणिक १ कोणिक २ उदायि ३ यह तीनो तो जैनधर्मी थे, नव नंदोकी मुझे खबर नही, कौनसा धर्म मानते थे. चंद्रगुप्त १ विंदुसार ए दोनो जैनी राजे थे, अशोकश्रीभी जैनराजा था, पीछेसें केइक बौद्धमति हो गया कहतेहै, और संप्रति तो परम जैनधर्मीराजा था.

प्र. १९ए–संप्रति राजाने जैनधर्मके वास्ते क्या क्या काम करेथे.

उ.–संप्रतिराजा सुहस्ति आचार्यका श्रावक शिष्य १२ बारां व्रतधारी था, तिसने द्रविड अंध्र करणाटादि और कावुल कुराशानादि अनार्य देशोमें जैनसाधुयोका विहार करके तिनके उपदेशसें पूर्वोक्त देशोमें जैनधर्म फैलाया, और निनानवे एए००० हजार जीर्ण जिन मंदरोंका उद्धार कराया, और छव्वीस २६००० हजार नवीन जिनमंदिर बनवाए थे, और सवाकिरोड १२५०००००जिन प्रतिमा नवीन वनवाइ थी, जिनके वनाए हूए जिनमंदिर गिरनार नडोलादि

स्थानोमे अबत्नी मौजूद खमेहे, और तिनकी ब-
नवाइ हुइ सैंकमो जिन प्रतिमात्रो महा सुंदर
विद्यमान कालमे विद्यमान है; और संप्रति राजा
ने ७०० सौ दानशाला करवाइ थी. और प्रजाकें
महा हितकारी ऊषधशालादिन्नी बनवाइ थी,
इत्यादि संप्रतिराजाने जैनमतकी वृद्धि और प्र-
न्नावना करी थी. विरात् ३९१ वर्ष पीछे हुआ है.

प्र. १३० —मनुष्योंमे कोइ ऐसी शक्ति वि
द्यमानहे कि जिसके प्रन्नावसें मनुष्य अद्भुत
काम कर सक्ताहै?

ऊ.—मनुष्यम अनंत शक्तियों कर्माके आ-
वरणसें ढंकी हुइहै, जेकर वे सर्व शक्तियां आव-
रण रहित हो जावेंतो मनुष्य चमत्कारी अद्भुत
काम कर सक्तेहै.

प्रं. १३१ वे शक्तियां किसने ढांक गेमीहै?

ऊ. आठ कर्माकी अनंत प्रकृतियोने आ-
छदन कर गेमीहै.

प्र. १३२ हमनेतो आठ कर्मकी १४८ वा
१५८ प्रकृतियां सुनीहै, तो तुम अनंत किस तरेंसें

कहेते है ?

उ· एकसौ १४० वा १५० यह मध्य प्रकृतियांके भेदहै, और उत्कृष्ट तो अनंत भेद है, क्योंके आत्माके अनंत गुणहै, तिनके ढांकनेवालीयां कर्म प्रकृतियांभी अनंत है.

प्र. १३३–मनुष्यमें जो शक्तियां अद्भुत काम करनेवालीयांहै तिनका थोमासा नाम लेके बतलाओ, और तिनका किंचित् स्वरूपभी कहो, और यह सर्व लब्धियां किस जीवकों किस कालमें होतीयांहै ?

उ.–आमोसहि लद्धी १ जिस मुनिके हाथादिके स्पर्श लगनेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम आमर्षौषधि लब्धि है, मुनि तिस लब्धिवाला कहा जाताहै, यह लब्धि साधुहीकों होती है.

विप्पोसहि लद्धी २–जिस साधुके मलमूत्रके लगनेसें रोगीका रोग जाए, तिसका नाम विट्पोषधि लब्धि है, इस लब्धिवाले मुनिका मल, विष्टा और मूत्र सर्व कर्पूरादिवत् सुगंधि-

वाला होता है, यह लब्धि साधुकोही होतीहै.

खेलोसहि लद्धी ३--जिस साधुका श्लेष्म थूंकही ऊषधिरूप है, जिस रोगीके शरीरकों लग जावेतो तत्काल सर्व रोग नष्ट हो जावे, यह सुगंधित होताहै, यह लब्धि साधुकों होती है, इसकों श्लेष्मोषधि लब्धि कहतेहै.

जल्लोसहि लद्धी ४--जिस साधुके शरीरका पसीना तथा मैलभी रोग दूर कर सके, तिसकों जल्लोषधि लब्धि कहते है, यहभी साधुकोंही होती है.

सघोसहि लद्धी ५ जिस साधुके मलमूत्र केश रोम नखादिक सर्वोंषधि रूप हो जावे, सर्व रोग दूर कर सकें, तिसकों सर्वोषधि लब्धि कहतेहै, यह साधुको होतीहै.

संभिन्नासोए लद्धी ६-जो सर्व इंद्रियोंसे सुणे, देखे, गंध सूंघे, स्वाद लेवे, स्पर्श जाणे एकैक इंद्रियसें सर्व इंद्रियांकी विषय जाणे अथवा बारा योजन प्रमाण चक्रवर्तिकी सेनाका पड़ाव होताहै, तिसमे एक साथ वाजते हुए सर्व वजं

ओंकों अलग अलग जान सके तिसको संभिन्न श्रोत्र लब्धि कहतेहै, यह साधुको होवे है.

उहिनाणं लद्धी ७-अवधिज्ञानवंतको अवधिज्ञान लब्धि होती है, यह चारो गतिके जीवांको होतीहै, विशेष करके साधुकों होतीहै.

रिजमइ लद्धी ८-जिस मनः पर्यायज्ञानसें सामान्य मात्र जाणें, जैसें इस जीवने मनमें घट चिंतन कराहे इतनाही जाणे, परंतु ऐसा न जानेकि वैसा घट किस क्षेत्रका उत्पन्न हूआ किस कालमें उत्पन्न हुआहै, अथवा अढाइ द्वीपके मनुष्योंके मनके बादर परिणामा जाणे तिसकों ऋजुमति लब्धि कहते है, यह निश्चय साधुकों होतीहै अन्यकों नही.

विउलमइ लद्धी ९-जिस मनः पर्यायसे ऋजुमतिसें अधिक विशेष जाणें, जैसें इसने सोंनेका घट चिंतन कराहै, पाडलिपुत्रका उत्पन्न हूआ वसंतऋतुका अथवा अढाइ द्वीपके संज्ञी जीवांके मनके सूक्ष्म पर्यायांकोंभी जाणे, तिसकों [illegible] ति लब्धि कहतेहै, इसका स्वामी साधुही

होवे, यह लब्धि केवल ज्ञानके विना हुआ जाए नही.

चारण लब्धी १०–चारण दो तरेके होतेहे, एक जंघा चारण १ दूसरा विद्या चारण २ जंघा चारण उसकों कहतेहै जिसकी जंघायोंमे आकाशमें उडनेकी सक्ति उत्पन्न होवे सो जंघा चारण. ऊंचातो मेरु पर्वतके शिखर तक उडके जा सक्ताहे, और तिरछा तेरमे रुचक द्वीप तक जा सकताहे, और विद्याचारण ऊंचा मेरु शिखरतक और तिरछा आठमें नंदीश्वर द्वीप तक विद्याके प्रभावसें जा सक्ताहे, येह दोनो प्रकारकीं लब्धिकों चारण लब्धि कहतेहै, यह साधुकों होतीहै.

आसीविष लब्धी ११–आशी नाम दाढाका है, तिनमें जो विष होवे सो आशीविष. सो दो प्रकारेहै, एक जाति आशीविष दूसरा कर्म आशीविष, तिनमें जाति जहरीके चार भेद है. विछु १ सर्प २ मींडक ३ मनुष्य ४ और तप करनेसें जिस पुरुषको आशीविष लब्धि होती है सो शाप देके अन्यकों मार सक्ताहे, तिसकोंभी

आशीविष लब्धि कहतेहै.

केवल लद्धी १२-जिस मनुष्यकों केवल ज्ञान होवे, तिसकों केवलि नामे लब्धिहै.

गणहर लद्धी १३-जिससें अंतर मुहूर्त्तमें चौदह पूर्व गूंथे और गणधर पदवी पामें, तिसकों गणधर लब्धि कहतेहै.

पुव्वधर लद्धी १४-जिससें चौदहपूर्व दश पूर्वादि पूर्वका ज्ञान होवे, सो पूर्वधर लब्धि.

अरहंत लद्धी १५-जिससे तीर्थंकर पद पावे, सो अरिहंत लब्धि.

चक्कवट्टि लद्धी १६-चक्रवर्त्तीकों चक्रवर्ती लब्धि.

वलदेव लद्धी १७-वलदेवकों वलदेव लब्धि.

वासुदेव लद्धी १८-वासुदेवकों वासुदेवकी लब्धि.

खीरमहुसप्पिआसव लद्धी १९-जिस वचनमें ऐसी शक्तिहै कि तिसकी वाणि सुण श्रोता ऐसा तृप्त हो जावेके मानु दूध, घृत, शाकर, मिसरीके खानेसे तृप्त हुआहै, तिसकों खीर

मधुसर्पि आसव लब्धि कहते है, यह साधुकों होती है.

कुष्य वुद्धि लब्धी २०–जैसे वस्तु कोठेमें पमी हुइ नाश नही होतीहै, ऐसेही जो पुरुष जितना ज्ञान सीखे सो सर्व वैसेका तैसाही जन्मपर्यंत न्नूले नही, तिसकों कोष्टक बुद्धि लब्धि कहते है.

पयाणुसारी लब्धी २१–एक पद सुननेसें संपूर्ण प्रकरण कह देवे, तिसकों पदानुसारी लब्धि कहते है.

बीयवुद्धि लब्धी २२–जैसें एक बीजसें अनेक बीज जत्पन्न होतेहैं, तैसेही एक वस्तुके स्वरूपके सुननेसें जिसको अनेक प्रकारका ज्ञान होवे, सो बीजबुद्धि लब्धिहै.

तेजलेसा लब्धी २३ जिस साधुके तपके प्रन्नावसें ऐसी शक्ति जत्पन्न होवेके जेकर क्रोध चढेतो मुखके फुंकोरसें कितनेही देशांकों वालके न्नस्म कर देवे, तिसकों तेजोलेश्या लब्धि कहते है

आहारए लद्धी २४ चउदह पूर्वधर मुनि तीर्थंकरकी ऋद्धि देखने वास्ते, १ वा कोइ अर्थ अवगाहन करने वास्ते, अथवा अपना संशय दूर करने वास्ते अपने शरीरमें हाथ प्रमाण स्फटिक समान पूतला काढके तीर्थंकरके पास भेजताहै, तिस पूतलेसें अपने कृत्य करके पाछा शरीरमें संहार लेताहै, तिसकों आहारक लब्धि कहतेहैं,

सीयलेसा लद्धी २५ तपके प्रभावसें मुनिकों ऐसी शक्ति उत्पन्न होतीहैके जिससें तेजो लेश्याकी उष्णताकों रोक देवे, वस्तुकों दग्ध न होने देवे, तिसकों शीतलेशा लब्धि कहते है.

वेउव्विदेह लद्धी २६ जिसकी सामर्थसें अणुकी तरें सूक्ष्म कण मात्रमें हो जावे, मेरुकी तरें भारी देह कर लेवे, अर्क तूलकी तरें लघु हलका देह कर लेवें, एक वस्त्रमेंसें वस्त्र करोमों और एक घटमेंसें घट करोमों करके दिखला देवे, जैसा इछे तैसा रूप कर सके, अधिक अन्य क्या कहिये, तिसका नाम वैक्रिय लब्धि है.

अक्खीणमहाणसी लद्धी २७—जिसके प्रभा

वसें जिस साधुनें आहार आणाहै, जहां तक सो साधु न जीमे तहां तक चाहो कितनेही साधु तिस भिक्षामेंसे आहार करे तोभी खूटे नही, तिसकों अक्षीणमहानसिक लब्धि कहते है.

पुलाय लब्धी २८–जिसके प्रभावसें धर्मकी रक्षा करने वास्ते धर्मका द्वेषी चक्रवर्त्यादिकों सेना सहित चूर्ण कर सके, तिसकों पुलाकलब्धि कहते है.

पूर्वोक्त येह लब्धियां पुन्यके और तपके और अंतःकरणके बहुत शुद्ध परिणामोके होनेसें होवेहै, ये सर्व लब्धियां प्रायें तीसरे चौथे आरेमेंही होतीयांहै, पंचम आरेकी शुरुआतमेंभी होतीयां है.

प्र. १३४–श्री महावीरस्वामीकों ये पूर्वोक्त लब्धियां २८ अगवीस थी?

उ.–श्री महावीरजीकोंतो अनंतीयां लब्धियां थी येह पूर्वोक्ततो २८ अठावीस किस गिनतीमेंहै, सर्व तीर्थंकराकों अनंत लब्धियां होतीहै.

प्र. १३५–इंद्रभूति गौतमकों ये सर्व ल-

ब्धियों थी ?

उ.–चक्री, बलदेव, वासुदेव ऋजुमति, ये नही थी, शेष प्राये सर्वही लब्धियां थी.

प्र. १३६–आप महावीरकोंही भगवंत सर्वज्ञ मानतेहो, अन्य देवोंकों नही, इसका क्या कारणहै ?

उ.–अपने २ मतका पक्षपात छोडके विचारीये तो, श्री महावीरजीमेंही भगवंतके सर्व गुण सिद्ध होतेहै, अन्य देवोमें नही.

प्र. १३७ श्री महावीरजीकों हूएतो बहुत वर्ष हूएहै, हम क्योंकर जानेके श्री महावीरजीमेंही भगवानपणेके गुण थे, अन्य देवोंमें नही थे?

उ.–सर्व देवोंकी मूर्त्तियों देखनेसें और तिनके मतोमें तिन देवोंके जो चरित कथन करेहै तिनके वांचने और सुननेसें सत्य भगवंतके लक्षण और कल्पित भगवंतोंके लक्षण सर्व सिद्ध हो जावेगे.

प्र. १३८ कैसी मूर्त्तिके देखनेंसें भगवंतकी यह मूर्त्ति नहीहै, ऐसे हम माने ?

उ. जिस मूर्त्तिके संग स्त्रीकी मूर्त्ति होवे तव जाननाके यह देव विषयका ज्ञोगी था. जिस मूर्त्तिके हाथमें शस्त्र होवे तव जानना यह मूर्त्ति रागी, द्वेषी वैरीयोके मारने वाले और असमर्थ देवोकी हैः जिस मूर्त्तिके हाथमें जपमाला होवे तव जानना यह किसीका सेवक है, तिससें कुछ मागने वास्ते तिसकी माला जपताहै.

प्र. १३ए परमेश्वरकी कैसी मूर्त्ति होतीहै?

उ.–स्त्री, जपमाला, शस्त्र, कमंडलुसें रहित और शांत निस्पृह ध्यानारूढ समता मतवारी, शांतरस, मग्नसुख विकार रहित, ऐसी सच्चे देवकी मूर्त्ति होतीहै.

प्र. १४० जैसे तुमनें सर्वज्ञकी मूर्त्तिके लक्षण कहेहै, तैसें लक्षण प्रायें बुद्धकी मूर्त्तिमेंहै, क्या तुम बुद्धको ज्ञगवंत सर्वज्ञ मानतेहो ?

उ.–हम निकेवल मूर्त्तिकेही रूप देखनेसें सर्वज्ञका अनुमान नही करतेहे, किंतु जिसका चरितज्ञी सर्वज्ञके लायक होवे, तिसकों सच्चा देव मानते है.

प्र. १४१ क्या बुधका चरित सर्वज्ञ सच्चे देव सरीखा नहीहै ?

उ. बुद्धके पुस्तकानुसार बुद्धका चरित सर्वज्ञ सरीखा नही मालुम होताहै.

प्र. १४२ बुद्धके शास्त्रोंमें बुद्धका किसतरेंका चरित है, जिससें बुद्ध सर्वज्ञ नहीहै ?

उ.—बुद्धका बुद्धके शास्त्रानुसारे यह चरित जो आगे लिखतेहै, तिसें बुद्ध सर्वज्ञ नही सिद्ध होताहै. १ प्रथम बुद्धने संसार छोडके निर्वाणका मार्ग जानने वास्ते योगीयांका शिष्य हुआ, वे योगी जातके ब्राह्मणथे और तिनकों बडे ज्ञानी न्नी लिखाहै, तिनके मतकी तपस्यारूप करनीसें बुद्धका मनोर्थ सिद्ध नही हुआ, तब तीनको छोडके बुद्ध गयाके पास जंगलमें जा रहा १, इस ऊपरके लेखसेतो यह सिद्ध होता है कि बुद्ध कोइ ज्ञानी बुद्धिमान्‌तो नही था, नहीतो तिनके मतकी निष्फल कष्ट क्रिया काहेको करता, और गुरुयोंके छोडनेसें स्वछंदचारी अविनीतन्नी इसी लेखसें सिद्ध होताहै १ पीछे बुद्धने उग्र ध्यान

और तप करनेमें कितनेक वर्ष व्यतीत करे २ इस लेखसें यह सिद्ध होताहैकि जब गुरुयोंको छोड़ा निकम्मे जानके तो फेर तिनका कथन करा हुआ, उग्र ध्यान और तप निष्फल काहेको करा, इस सेंनी तप करता हुआ, जब मूर्छा खाके पड़ा तहां तकन्नी अज्ञानी था, ऐसा सिद्ध होता है १ पीछे जब बुद्धने यह विचार कराके केवल तप करनैसें ज्ञान प्राप्त नही होताहै, परंतु मनके उधाड़ करनेसें प्राप्त करना चाहिये, पीछे तिसने खानेका निश्चय करा और तप छोड़ा २ जब ध्यान और तप करनेसें मन न उघड़ा तो क्या खानेसें मन उघड़ शकताहै, इससें यहन्नी तिसकी समझ असमंजस सिद्ध होती है, ३ पीछे अजपाल वृक्षके हेठे पूर्व तर्फ बैठके इस्ने ऐसा निश्चय कराके जहां तक मैं बुद्ध न होवांगा तहां तक यह जगा न छोडुंगा, तिस रात्रिमें इसकों इज्ञारोध करनेका मार्ग और पुनर्जन्मका कारण और पूर्व जन्मांतरोका ज्ञान उत्पन्न हुआ, और दूसरे दिनके सवेरेके समय इसका मन परिपूर्ण उघड़ा, और स-

वोंपरि केवलज्ञान उत्पन्न हुआ २ अब विचारीये जिसने उग्रध्यान और तप छोड दीया और नित्यप्रते खानेका निश्चय करा तिसकों निर्हेतुक इ न्द्रिरोध करनेका और पुनर्जन्मके कारणोंका ज्ञान कैसें हो गया, यह केवल अयौक्तिक कथनहै. मोग्गलायन और शारिपुत्र और आनंदकी कल्पनासें ज्ञानी लोकोमें प्रसिद्ध हुआ है ३, बुद्धने यह कथन करा है, आत्मा नामक कोइ पदार्थ नही है, आत्मातो अज्ञानियोने कल्पन करा है २, जब बुद्धने ज्ञानमें आत्मा नही देखा तब केवलज्ञान किसकों हुआ, और बुद्धने पुनर्जन्मका कारण किसका देखा, और पूर्व जन्मांतर करने वाला किसकों देखा, और पुन्य पापका कर्त्ताभूक्ता किसकों देखा, और निर्वाण पद किसकों हूआ देखा, जेकर कोइ यह कहेके नवीन नवीन क्षणकों पिछले २ क्षणोकी वासना लगती जाती है, कर्त्ता पिछला क्षणहै, और भोक्त अगला क्षणहै, मोक्षका साधन तो अन्य क्षणने करा, और मोक्ष अगले क्षणकी हइ. निर्वाण उसकों कहतेहै कि जो

दीपककी तरें क्षणोका बुझ जाना, अर्थात् सर्व क्षण परंपरायका सर्वथा अन्नाव हो जाणा, अथवा शुद्ध क्षणोकी परंपराय रहती है. पांच स्कंधोसें वस्तु उत्पन्न होती है, पांचो स्कंधन्नी क्षणि कहे, कारण कार्य एक कालमे नही है, इत्यादि सर्व बौद्ध मतका सिद्धांत अयौक्तिक है १ बुद्धके शिष्य देवदत्तने बुधको मांस खाना बुडानेंके वास्ते बहुत उपदेश करा, परंतु बुद्धने न माना, अंतमेंन्नी सूयरका मांस और चावल अपने न्नक्तके घरसें लेके खाया, और वेदना ग्रस्त होकरके मरा, और पाणीके जीव बुद्धकों नही दीखे तिससें कच्चे पानीके पीने और स्नान करनेका उपदेश अपने शिष्योंकों करा, इत्यादि असमंजस मतके उपदेशककों हम क्यों कर सर्वज्ञ परमेश्वर मान सके, जो जो धर्मके शब्द बौद्ध मतमें कथन करे है वे सर्व शब्द ब्राह्मणोके मतमेंतो है नही, इस वास्ते वे सर्व शब्द जैन मतसें लीयेहै. बुद्धसें पहिलें जैन धर्म था, तिसका प्रमाण हम ऊपर लिख आए है, बुद्धके शिष्य मौज्ञलायन और शारिपु-

ग्रने श्री महावीरके चरितानुसारी बुद्धकों सर्वसें ऊंचा करके कथन करा सिद्ध होताहै, इस वास्ते जैनमतवाले बुद्धके धर्मको सर्वज्ञका कथन करा हुआ नही मानते है.

प्र. १४३–कितनेक यूरोपीयन विद्वान् ऐसे कहतेहै कि जैन मत ब्राह्मणोंके मतमेंसें लीयाहै, अर्थात् ब्राह्मणोके शास्त्रोकी वार्ता लेके जैन मत रचा है ?

उ–यूरोपीयन विद्वानोंने जैनमतके सर्व पुस्तक वांचे नही मालुम होतेहै, क्योंकि जेकर ब्राह्मणोके मतमें अधिक ज्ञान होवे, और जैन-मतमें तिसके साथ मिलता थोमासा ज्ञान होवे, तव तो हमभी जैनमत ब्राह्मणोके मतसें रचा ऐसा मान लेवे, परंतु जैनमतका ज्ञानतो ब्राह्म-णादि सर्व मतोंके पुस्तकोंसें अधिक और विल-क्षणहै, क्योंकि जैनमतके भेद पुस्तक और कर्मा के स्वरूप कथन करनेवाले कर्म प्रकृति, १ पंच संग्रह, २ षट्कर्म ग्रंथादि पुस्तकोंमें जैसा ज्ञान कथन करा है, तैसा ज्ञान सर्व दुनियाके मतके

पुस्तकोंमे नहीहै, तो फेर ब्राह्मणोके मतके ज्ञानसें जैन मत रचा क्योंकर सिद्ध होवे, बलकि यह तो सिद्धनी हो जावेके सर्व मतोमें जो जो सूक्त वचन रचना है वे सर्व जैनके द्वादशांग समुद्रकेही बिंदु सर्व मतोमें गये हुएहै. विक्रमादित्य राजेके प्रोहितका पुत्र मुकंदनामा चार वेदादि चौदह विद्याका पारगामी तिसने वृद्धवादी जैनाचार्यके पास दीक्षा लीनी. गुरुने कुमुदचंद्र नाम दीना और आचार्यपद मिलनेसें तिनका नाम सिद्धसेन दिवाकर प्रसिद्ध हुआ, जिनका नाम कवि कालीदासने अपने रचे ज्योतिर्विदान्नरण ग्रंथमें विक्रमादित्यकी सन्नाके पंम्तिोके नाम लेतां श्रुतसेन नामसें लिखाहै, तिनोनें अपने रचे बत्तीस बत्तीसी ग्रंथमें ऐसा लिखाहै, सुनिश्चितं नःपरतंत्र युक्तिपु ॥ स्फुरंतिया कश्चिन्सुक्तिसंपदः ॥ तवैवताः पूर्वमहार्णवोञ्चता ॥ जगत्प्रमाणं जिनवाक्य विप्रुष ॥१॥ उदधाविव सर्व संधव ॥ समुदीरणा त्वयि नाथ दृष्टयः ॥ नचतासु नवान्[illegible] प्रविन्नक्त सरित्स्विवोदधिः ॥ १ ॥ प्रथम

का न्नावार्थ ऊपर लिख आएहै, दूसरे श्लोकका
न्नावार्थ यह है, कि समुद्रमें सर्व नदीयां समा
सक्ती है, परंतु समुद्र किसीन्नी एक नदीमें नही
समा सक्ता है, तैसे सर्व मत नदीयां समान है,
वैतो सर्व स्याद्वाद समुद्ररूप तेरे मतमे समा सक्ते
है, परंतु तेरा स्याद्वाद समुद्ररूप मत किसी म-
तमेंन्नी संपूर्ण नही समा सक्ता है, ऐसेही श्री ह
रिन्नद्रसूरिजी जो जातिके ब्राह्मण और चित्रकू-
टके राजाके प्रोहित थे और वेद वेदांगादि चौदह
विद्याके पारगामी थें, तिनोनें जैनकी दीक्षा लेके
१४४४ ग्रंथ रचेहै, तिनोनेन्नी ऊपदेशपद षोम्हश
कादि प्रकरणोमें सिद्धसेन दिवाकरकी तरेही लि
खाहै तथा श्री जिनधर्मी हुआ पीछे जानाहै, जि
सने शैवादि सकल दर्शन और वेदादि सर्व मतों
के शास्त्र ऐसे पंम्हित धनपालने जोके न्नोजराजा
की सन्नामें मुख्य पंम्हित था, तिसने श्री ऋष-
न्नदेवकी स्तुतिमें कहाहै, पावंति जसं असमंज-
सावि, वयणेहिं जेहि पर समया, तुह समय
महो अहिणो, ते मंदाविंडु निस्संदा ॥ १ ॥ अ-

स्यार्थः ॥ जैनमतके विना अन्य मतके असमंजस वचनरूप शास्त्र जो जगमें यशको पावेंहै जैनसे वचनोसें वे सर्व वचन तेरे स्याद्वादरूप महोदधि के अमंद विंदु उमके गए हुएहै, इत्यादि सैकमो चार वेद वेदांगादिकें पाठीयोनें जैनमतमे दीक्षा लीनी है, क्या उन सर्व पंमितोकों वौद्धायनादि शास्त्र पमते हुआंको नही मालुम पमा होगा के वौधायनादि शास्त्र जैनमतके वचनोसें रचे गये है, वा जैन मत वौधायनादि शास्त्रोंसें रचा गया है, जेकर कोइ यह अनुमान करके श्री महावीर-जीसें वौधायनादि शास्त्र पहिले रचे गएहै, इस वास्ते जैनमत पीछेसे हुआहै, यह माननाभी ठीक नही, क्योंकि श्री महावीरजीसें २५० वर्ष पहिलें श्री पार्श्वनाथजी और तिनसें पहिले श्री नेमिनाथादि तीर्थकर हुएहै, तिनके वचन लेके वौधायनादि शास्त्र रचे गएहै, जैनी ऐसें मानतेहै; जेकर कोइ ऐसें मानता होवे कि जैनमत थोमाहै और ब्राह्मण मत वहुत है, इस वास्ते थोमे मतसें वमा मत रचा क्यों कर सिद्ध होवे; यह अनुमान अ

तोत कालकी अपेक्षाए कसा मानना ठीक नही, क्योंकि इस हिंदुस्तानमें बुद्धके जीते हुए बुद्धमत विस्तारवंत नही था, परंतु पीछेसे ऐसा फैलाके ब्राह्मणोका मत बहुतही तुछ रह गया था; इसी तरे कोइ मत किसी कालमे अधिक हो जाता है, और किसी कालमे न्यून हो जाता है, इस वास्ते थोडा और बडा मत देखके थोडे मतको बडेसे रचा मानना ये अनुमान सच्चा नही है, न्नट्ट मो क्षमूलरने यह जो अनुमान करके अपने पुस्तकमें लिखाहै कि वेदोंके छंदोन्नाग और मंत्रन्नागके रचेकों २७०० वा ३१०० सौ वर्ष हुएहै, तो फेर बौधायनादि शास्त्र बहुत पुराने रचे हुए क्यों कर सिद्ध होवेंगे, इस वास्ते अपने मनकल्पित अनुमानसें जो कल्पना करनी सो सर्व सत्य नही हो शक्ती है, इस वास्ते अन्य मतोंमे जो ज्ञानहै सो सर्व जैन मतमें है, परंतु जैनमतका जो ज्ञानहै सो किसी मतमे सर्व नही है; इस वास्ते जैनमतके द्वादशांगोकेही किंचित वचन लेके लोकोने मनकल्पित उसमें कुछ अधिक मिलाके मत रच

हीनैहै; हमारे अनुमानसेंतो यही सिद्ध होता है.

प्र. १४४–कोइ यूरोपियन विद्वान् ऐसे कहताहै कि बौद्धमतके पुस्तक जैनमतसें चढतेहै?

उ–जेकर श्लोक संख्यामे अधिक होवे अथवा गिनतिमें अधिक होवे अथवा कवितामें अधिक होवे, तवतो अधिकता कोइ माने तो हमारी कुछ हानि नहीहै, परंतु जेकर ऐसें मानता होवेके बौद्ध पुस्तकोंमें जैन पुस्तकोंसें धर्मका स्वरूप अधिक कथन करा है, यह मानना बिलकुल भूल संयुक्त मालुम होताहै, क्योंकि जैन पुस्तकोंमें जैसा धर्मका रूप और धर्म नीतिका स्वरूप कथन कराहै, वैसा सर्व दुनीयांके पुस्तकोंमें नही है.

प्र. १४५–जैनके पुस्तक बहुत थोरे है, और बौधमतके पुस्तक बहुत है, इस वास्ते अधिकता है?

उ–संप्रति कालमें जो जैनमतके पुस्तकहै वे सर्व किसी जैनीनेभी नही देखेहै, तो यूरोपीयन विद्वान कहांसे देखे; क्योंकि पाटन और जै-

सलमेरमें ऐसे गुप्त भंमार पुस्तकोंके है कि वे किसी इंग्रेजनेभी नहो देखे है, तो फेर पूर्वोक्त अनुमान कैसें सत्य होवे.

प्र. १४६–जैनमतके पुस्तक जो जैनी रखते है सो किसोकों दिखाते नही है, इसका क्या कारण है ?

उ–कारणतो हमकों यह मालुम होताहै कि मुसलमानोंकी अमलदारीमें मुसलमानोंने बहुत जैनमतोपरि जुल्म गुजारा था, तिसमें सैंकडो जैनमतके पुस्तकोंके भंमार बाल दीये थे, और हजारो जैनमतके मंदिर तोमके मसजिदे बनवा दीनी थी. कुतब दिल्ली अजमेर जुनागढके किलेमें प्रभास पाटणमें रांदेर, भरूचमें इत्यादि बहुत स्थानोंमें जैनमंदिर तोमके मसजिदो बनवाइ हुइ खमी है, तिस दिनके मरे हूए जैनि किसीकोंभी अपने पुस्तक नहो दिखाते है, और गुप्त भंमारोंमें बंध करके रख गेमेहे.

प्र. १४७–इस कालमें जो जैनी अपने पुस्तक किसोकों नही दिखातेहै, यह काम अच्छा

है वा नही ?

उ.–जो जैनी लोक अपने पुस्तक बहुत यत्नसें रखतेहै यहतो बहुत अच्छा काम करते है, परंतु जैसलमेरमें जो भंडारके आगे पथ्थरकी भीत चिनके भंडार बंध कर छोड़ा है, और कोइ उसकी खबर नही लेता है, क्या जाने वे पुस्तक मट्टी हो गयेहैके शेष कुछ रह गयेहै, इस हेतुसें तो हम इस कालके जैन मतीयोंको बहुत नालायक समझते है.

प्र. १४८–क्या जैनी लोकोंके पास धन न होहै, जिससें वे लोक अपने मतके अति उत्तम पुस्तकोंका उद्धार नही करवाते है ?

उ.–धनतो बहुतहै, परंतु जैनी लोकोंकी दो इंद्रिय बहुत जबरदस्त हो गइहै, इस वास्ते ज्ञान भंडारकी कोइभी चिंता नही करतेहैं.

प्र. १४९–वे दोनो इंद्रियो कौनसी है जो ज्ञानका उद्धार नही होने देती है ?

उ.–एकतो नाक और दूसरी जिव्हा, क्यों कि नाकके वास्ते अर्थात् अपनी नामदारीके

वास्ते लाखों रूपइये लगाके जिन मंदिर वनवाने चले जातेहै, और जिव्हाके वास्ते खानेमे लाखों रूपइये खरच करतेहै, चूरमेआदिकके लडुयोंकी खवर लीये जातेहै, परंतु जीर्णभंमारके उद्धार करणेकी वाततो क्या जाने, स्वप्नमेभी करते हो वेंगेके नही.

प्र. १५०–क्या जिन मंदिर और साहम्मि वच्छल करनेमें पापहै, जो आप निषेध करतेहा?

उ.–जिन मंदिर वनवानेका और साहा-म्मिवच्छल करनेका फलतो स्वर्ग और मोक्षकाहै, परंतु जिनेश्वर देवनेतो ऐसे कहाकि जो धर्मक्षेत्र विगमता होवे तिसकी सार संभार पहिले करनी चाहिये; इस वास्ते इस कालमें ज्ञान भंमार विगमताहै. पहिले तिसका उद्धार करना चाहिये. जिन मंदिरतो फेरभी वन सकतेहै, परंतु जेकर पुस्तक जाते रहेगे तो फेर कोन वना सकेगा.

प्र. १५१–जिन मंदिर वनवाना और सा-हम्मिवच्छल करना, किस रीतका करनां चाहिये?

उ.–जिस गामके लोक धनहीन होवें, जिन

मंदिर न वना सकें, और जिन मार्गके न्नक्त होवे, तिस जगे आवश्य जिन मंदिर करानां चाहिये, और श्रावकका पुत्र धनहीन होवे तिसकों किसी का रुजगारमें लगाके तिसके कुटंबका पोषण होवे ऐसे करे, तथा जिस काममें सीदाता होवे तिसमें मदत करे. यह साहम्मिवच्छलहै, परंतु यह न समऊनांके हम किसी जगे जिन मंदिर वनानेकों और वनिये लोकोंकें जिमावने रुप साहम्मिवच्छलका निषेध करतेहै, परंतु नामदारीके वास्ते जिन मंदिर वनवानेमें अल्प फल कहते है, और इस गामके वनीयोने उस गामके वनियोंकों जिमाया और उस गामवालोंने इस गाम के वनियोंकों जिमाया, परंतु साहम्मिकों साहाय्य करनेकी बुद्धिसें नही, तिसकों हम साहमिवच्छल नही मानतेहे, किंतु गधें खुरकनी मानतेहै.

प्र. १५९–जैनमततो तुमारे कहनेसें हमको वहुत उत्तम मालुम होताहै, तो फेर यह मत वहुत क्यों नही फैलाहै ?

उ.–जैनमतके कायदे ऐसे कठिन है कि

तिन उपर अल्प सत्ववाले जिव वहुत नही चल सक्तेहै. गृहस्थका धर्म और साधुका धर्म वहुत नियमोसें नियंत्रितहै, और जैनमतका तत्व तो वहुत जैन लोकन्नी नही जान सक्तेहै, तो अन्यमतवालोंको तो वहुतही समऊना कठिनहै, बौद्द मतके गोविंदआचार्यनें न्नरूचमें जैनाचार्यसे चरचामे हार खाइ, पीछे जैनके तत्व जानने वास्ते कपटसें जैनकी दीक्षा लीनी. कितनेक जैनमतके शास्त्र पढके फेर बोध वन गया, फेर जैनाचार्यों के साथ जैनमतके खंमन करनेमें कमर वांधके चरचा करी, फेरन्नी हारा, फेर जैनकी दीक्षा लीनी, फेर हारा, इसीतरें कितनी वार जैनशास्त्र पढे; परंतु तिनका तत्व न पाया, पिछली विरीया तत्व पाया तो फेर बोध नही हुआ. जैनमत समऊनां और पालनां दोनो तरेसें कठिन है, इस वास्ते वहुत नही फैला है; किसी कालमे वहुत फैलान्नी होवेगा, क्या निषेध है, इसीतरे मीमांसाका वार्त्तिककार कुमारिल न्नट्टने और किरणावलिके कर्त्ता उदयननेन्नी कपटसें जैन दीक्षा

लीनी, परंतु तत्व नही प्राप्त हुआ.

प्र. १५३–जैनमतमें जो चौदहपूर्व कहे जाते हैं, वे कितनेक बडेथे और तिनमें क्या क्या कथन था. इसका संक्षेपसें स्वरूप कथन करो ?

उ.–इस प्रश्नका उत्तर अगले यंत्रसें देख लेना.

पूर्व नाम	पद संख्या	शाहीलिखनेमें कितनी	विषय क्याहै.
उत्पाद पूर्व १	एक करोड पद १००००००००	१ एकहाथी जितने शाहीके ढेरसें लिखा जावे	सर्व द्रव्य और सर्व पर्यायांकी उत्पत्तिका स्वरूप कथन करा है.
आग्रायणीपूर्व २	९६००००० छानवेलाख पद.	२ हाथीप्रमाण शाहीसें एवं सर्वत्र.	सर्व द्रव्य और सर्व पर्याय और सर्व जीव विशेषांके प्रमाणका कथन है.
वीर्यप्रवादपूर्व ३	सित्तरलाख पद. ७००००००	४ हाथी प्रमाण.	कर्म सहित और कर्म रहित सर्व जीवांका और सर्व अजीव पदार्थोंके वीर्य अर्थात् शक्तिके स्वरूपका कथन है.
अस्ति नास्ति प्रवाद पूर्व ४	साठलाख पद ६००००००	८ हाथी प्रमाण.	जो लोकमें धर्मास्तिकायादि अस्तिरूप है और जो खर शृंगादि नास्तिरूप है तिसकाकथन है अथवा सर्व वस्तु स्वरूप करके अस्तिरूप है और पररूप करके नास्तिरूप है ऐसा कथन है.

ज्ञान प्र वाद पूर्व ५	एककरोड पद १००००००० एक पद न्यून.	१६ हाथी प्रमाण.	पांचो ज्ञान मति आदि तिनका महा विस्तारसें कथन है.
सत्य प्र वाद पूर्व ६	एककरोड पद १००००००० ६ पद अधिक	३२ हाथी प्रमाण	सत्य संयम वचन इन तीनोंका विस्तारसें कथन है.
आत्मप्र वाद पूर्व ७	छव्वीसकरोड पद. २६०००००००	६४ हाथी प्रमाण.	आत्मा जीव तिसका सानमों ७०० नयके मतोंसे स्वरूप कथन करा है.
कर्मप्र वाद पूर्व ८	एक करोड असी हजार. १००८००००	१२८ हाथी प्रमाण.	ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्मका प्रकृति स्थिति अनुभावप्रदेशादिसें स्वरूपका कथनकराहै.
प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्व. ९	चोरासी लाख पद. ८४०००००	२५६ हाथी प्रमाण.	प्रत्याख्यान त्यागने योग्य वस्तुयोंका और त्यागका विस्तारसें कथन करा है,
विद्यानुप्रवाद पूर्व. १०	एक करोड दस लाख पद. ११००००००	५१२ हाथी प्रमाण.	अनेक अतिशयवंत चमत्कार करनेवाली अनेक विद्यायोंका कथन है,
अवंध्य पूर्व. ११	छव्वीस करोड पद. २६०००००००	१०२४ हाथी प्रमाण.	जिसमें ज्ञान, तप, सं[illegible] आदिका शुभ फ[illegible] पर्व प्रमादादि [illegible]

			शुभ फल कथन करा है
प्राणायु पूर्व. १२	एक करोड़ पंचाश लाख. पद. १५००००००	२०४८ हाथी प्रमाण	पांच इंद्रिय और मनबल, वचनबल, कायाबल और उच्छ्वास निःश्वास और आयु इन दशो प्राणाका जहां विस्तारसें स्वरूप कथन करा है.
क्रिया विशाल पूर्व. १३	नवे करोड़ पद. ९००००००००	४०९६ हाथी प्रमाण. शाहीसें लिखा जावे.	जिसमे कायक्यादि क्रिया वा संयमक्रिया छंदक्रियादि क्रियायोंका कथन है.
लोक बिंदुसार पूर्व. १४	साढेबारा करोड़ पद. १२५००००००	८१९२ हाथी प्रमाण	लोकमें वा श्रुतज्ञान लोकमें अक्षरोपरि बिंदु समान सार सर्वोत्तम सर्वाक्षरों के मिलाप जाननेकी लब्धिका हेतु जिसमें है.

प्र. १५४–जैनमतके पंच परमेष्टिकी जगे प्राचीन और नवीन मत धारीयोंनें अपनी बुद्धि अनुसारे लोकोंने अपने अपने मतमें किस रीतेसें कल्पना करीहै, और जैनी इस जगतकी व्यवस्था किस हेतुसें किस रीतीसें मानते है?

ज.—मतधारीयोंने जो जनमतके पंच परमेष्टोकी जगे जूठी कल्पना खमी करी है, सो नीचले यंत्रसें देख लेना.

जैनमत १	अर्हिहंत१	सिद्ध २.	आचार्य ३	उपाध्याय ४.	साधु ५.
सांख्य मत २.	कपिल	०	आसुरी	विद्यापाठक.	सांख्य साधु
वैदिक मत ३.	जैमनि	०	भट्टभाकर	विद्यापाठक.	०
नैयायिक मत ४.	गौतम	एकईश्वर	आचार्य नैयायिक	न्याय पाठक	साधु
वेदांत मत ५.	व्यास	एकब्रह्म	आचार्योस्ति	वेदांत पाठक	परमहंसादि
वैशेषिक मत ६.	शिव	एकईश्वर	कणाद	पाठक	साधु
यहूदी मत ७.	मूसा	एकईश्वर	अनेक	पाठक	उपदेशक
इसाइ मत ८.	ईशा	एकईश्वर	पथर सम त्यादि	पाठक	पादरी

मुसलमान मत ९.	महम्मद	एक ईश्वर	अनेक	पाठक	फकीर
शंकर मत १०.	शंकर	एकब्रह्म	आनंदागिरी आदि	शंकरभाष्यादि पाठक	गिरिपुरि भारती आदि
रामानुज मत ११.	रामानुज	एक ईश्वर रामचंद्र	अनेक	रामानुज मत पाठक	साधु वैश्नव
वलभ मत १२	वल्लभाचार्य	एक ईश्वर कृष्ण	अनेक	वल्लभ मत पाठक	तिस मतके साधु नहीं
कबीर मत १३.	कबीर	एक ईश्वर	अनेक	तन्मत पाठक	गृहस्थ वा साधु
नानक मत १४.	नानक	एक ईश्वर	अनेक	ग्रंथ पाठक.	उदासी साधु
दादूमत १५.	दादू	एक ईश्वर	सुंदर दासादि	तत् ग्रंथ पाठक	दादू पंथी साधु
गोरख मत १६	गोरख	एक ईश्वर	अनेक	तत् ग्रंथ पाठक	कानफटे योगी
स्वामीनारायण १७.	सामोनाराण	एक ईश्वर	स्त्री और परिग्रह धारी	तत् ग्रंथ पाठक	रंगे वस्त्रवाले धोले वस्त्रां वाले

दयानंदमत १८.	दया नंद.	एक ईश्वर	अस्ति	तन्मत पाठक	साधु

इत्यादि इस तरे मतधारीयोंने पंच परमेष्टीकी जगे पांच २ वस्तु कल्पना करी है, इस वास्ते पंच परमेष्टीके विना अन्य कोइ सृष्टिका कर्त्ता सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर नही है, निःकेवल लोकांको अज्ञान भ्रमसें सृष्टि कर्त्ताकि कल्पना उत्पन्न होती है, पूर्व पक्ष कोइ प्रश्न करे के जेकर सर्वज्ञ वीतराग ईश्वर जगतका कर्त्ता नहीहै, तो यह जगत अपने आप कैसे उत्पन्न हुआ, क्योंकि हम देखतेहै कर्त्ताके विना कुछभी उत्पन्न नही होताहै, जैसें घमीयालादि वस्तु. तिसका उत्तर–हे परीक्षको! तुमकों हमारा अभिप्राय यथार्थ मालुम पमता नही है, इस वास्ते तुम कर्त्ता ईश्वर कहतेहो, जो इस जगतमें बनाइ हुइ वस्तुहै, तिसका कर्त्ता तो हमभी मानतेहै, जैसें घट, पट, शराव, उदंचन, घमियाल, मकान, हाट, हवेली, संकल, जंजीरादि परंतु आकाश, काल, स्वभाव, परमाणु, जीव इत्यादि वस्तुयां

किसीकी रची हुइ नही है, क्योंकि सर्व विद्वानोका यह मतहैके जो वस्तु कार्यरूप उत्पन्न होतीहै तिसका उपादान कारण अवश्य होनां चाहिये. विना उपादानके कदापि कार्यकी उत्पत्ति नही होती है, जो कोइ विना उपादान कारणके वस्तुकी उत्पति मानता है, सो मूर्ख, प्रमाणका स्वरूप नही जानता है; तिसका कथन कोइ महा मूढ मानेगा, इस वास्ते आकाश १ आत्मा २ काल ३ परमाणु ४ इनका उपादान कारण कोइ नहीहै, इस वास्ते यें चारो वस्तु अनादि है, इनका कोइ रचनेवाला नही है, इससें जो यह कहना है कि सर्व वस्तुयों ईश्वरने रचीहै सो मिथ्याहै, अब शेष वस्तु पृथ्वी १ पानी २ अग्नि ३ पवन ४ वनस्पति ५ चलने फिरने वाले जीव रहे है, तथा पृथ्वीका भेद नरक, स्वर्ग, सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र, तारादि है, ये सर्व जड चैतन्यके उपादानसें बने है, जे जीव और जड परमाणुओंके संयोगसें वस्तु बनीहै, वे ऊपर पृथ्वी आदि लिख आयेहै, ये पृथ्वी आदि वस्तु प्रवाह-

सें अनादि नित्यहै, और पर्याय रूप करके अनित्यहै, और यें जड़ चैतन्य अनंत स्वभाविक शक्तिवाले है, वे अनंत शक्तियां अपने २ कालादि निमित्तोंके मिलनेसें प्रगट होतीहै, और इस जगतमें जो रचना पीछे हूइहै, और जो हो रहीहै, और जो होवेगी, सर्व पांच निमित्त उपादान कारणोंसें होतीहै, वे कारण येहहै, काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५; इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ इस जगतका कर्त्ता और नियंता ईश्वर किसी प्रमाणसें सिद्ध नही होताहै, तिसकी सिद्धीका खंडन पूर्वे पहिलें सब लिख आएहै, जैसे एक बीजमें अनंत शक्तियांहै, वृक्षमे जितने रंग विरंगे मूल १ कंद २ स्कंध ३ त्वचा ४ शाखा ५ प्रवाल ६ पत्र ७ पुष्प ८ फल ९ बीज १० प्रमुख विचित्र रचना मालुम होतीहै, सो सर्व बीजमें शक्ति रूपसें रहतीहै, जब कोइ बीजको जालके भस्म करे तब तिस बिजके परमाणुयोमें पूर्वोक्त सर्व शक्तियां रहतीहै, परंतु विना निमित्तके एकभी शक्ति प्रगट नही

जेकर बीजमें शक्तियां न मानीये तवतो गेहूंके बीजसें आंब और बंबूल मनुष्य, पशु, पक्षी आदिको उत्पन्न होने चाहिये. इस वास्ते सर्व वस्तुयोंमे अपनी २ अनंत शक्तियांहै. जैसा २ निमित्त मिलताहै तैसी २ शक्ति वस्तुमें प्रगट होतीहै, जैसें बीज कोठिमें पमाहै तिसमें वृक्षके सर्व अवयवोंके होनेकी शक्तियांहै, परंतु बीजके काल विना अंकुर नही हो सक्ताहै; कालतो वृष्टि ऋतुकाहै, परंतु भूमि और जलके संयोग विना अंकुर नही हो सक्ताहै, काल भूमि जलतो मिलेहै परंतु विना स्वभावके कंकर बोवेतो अंकुर नही होवेहै. बीजका स्वभाव १ काल २ भूमि ३ जलादितो मिलेहै, परंतु बीजमे जो तथा तथा भवन अर्थात् होनेवाली अनादि नियतिके विना बीज तैसा लंबा चौमा अंकुर निर्विघ्नसें नही दे सक्ताहै, जो निर्विघ्नपणे तथा तथा रूप कार्यको निष्पन्न करे सो नियति, औरं जेकर वनस्पतिके जीवोंने पूर्व जन्ममें ऐसे कर्म न करे होतेतो वनस्पतिमें उत्पन्न न होते; जेकर बोनेवाला न होवे

तथा वीज स्वयं अपने न्नारीपणे करके पृथ्वीमें न पमेतो कदापि अंकुर उत्पन्न न होवे; इस वास्ते वीजाकुंरकी उत्पत्तिमें पांच कारणहे. काल१ स्वन्नाव २ नियति ३ पूर्वकर्म ४ उद्यम ५ इन पांचोके सिवाय अन्य कोइ अंकुर उत्पन्न करनेवाला कोइ ईश्वर नही सिद्ध होताहे, तथा मनुष्य गर्न्नमें उत्पन्न होताहे तहांन्नी पांच कारणसेंही होताहे, गर्न्न धारणेके कालमेंही गर्न्न रहे १, गर्न्न की जगाका स्वन्नाव गर्न्न धारणका होवे तोही गर्न्न धारण करे २, गर्न्नका तथा तथा निर्विघ्नपनेसें होना नियतिसेंहे ३, जीवोंने पूर्व जन्ममें मनुष्य होनेके कर्म करेहे तोही मनुष्यपणे उत्पन्न होतेहे, ४ माता पिता और कर्मसें आकर्पण न होवेतो कदापि गर्न्न उत्पन्न न होवे, ५ इसीतरे जो वस्तु जगतमें उत्पन्न होतीहे सो इनही पांचो निमित्त कारणोंसें और उपादान कारणोसें होती है, और पृथ्वी प्रवाहसें सदा रहेगी और पर्याय रूप करके तो सदा नाश और उत्पन्न होती रही है; क्योंकि सदा असंख जीव पृथ्वीपणेहो उत्पन्न

होतेहै, और मरतेहै तिन जीवांके शरीरोंका पिं-
डही पृथ्वीहै. जो कोइ प्रमाणवेत्ता ऐसे समझ-
ताहै के कार्य रूप होनेसें पृथ्वी एक दिनतो अ-
वश्य सर्वथा नाश होवेगी, घटवत्. उत्तर—जैसा
कार्य घटहै तैसा कार्य पृथ्वी नहोहै, क्योंकि घ
टमें घटपणे उत्पन्न होनेवाले नवीन परमाणु नही
आतेहै, और पृथ्वीमें तो सदा पृथ्वी शरीरवाले
जीव असंख उत्पन्न होतेहै, और पूर्वले नाश हो-
तेहै. तिन असंख जीवांके शरीर मिलने और वि
छुरनेसे पृथ्वी तैसीही रहेगी. जैसें नदीका पाणी
अगला २ चला जाता है; और नवीन नवीन आ
नेसें नदी वैसीही रहती है, इस वास्ते घटरूप कार्य
समान पृथ्वी नही है, इस वास्ते पृथ्वी सदाही
रहेगी और तिसके उपर जो रचना है; सो पूर्वोक्त
पांच कारणोंसें सदा होती रहेगी. इस वास्ते
पृथ्वी अनादि अनंत काल तक रहेगी, इस वास्ते
पृथ्वीका कर्त्ता ईश्वर नही है, और जो कितनेक
भोले जीव मनुष्य १ पशु २ पृथ्वी ३, पवन ४,
वनस्पतिकों तथा चंद्र, सूर्यकों देखके और मनु-

ष्य पशुयोंके शरीरकी हड्डीयांकी रचना आंखके पम्दे खोपरीके टुकमे नशा जालादि शरीरोंकी विचित्र रचना देखकें हेरान होतेहै, जव कुछ आगा पीठा नही सूझताहै, तव हार कर यह कह देतेहै, यह रचना ईश्वरके विना कौन कर सक्ता है; इस वास्ते ईश्वर कर्त्ता २ पुकारते हैं; परंतु जगत् कर्त्ता माननेसें ईश्वरका सत्यानाश कर देते है, सो नही देखतेहै. काणी हथनी एक पासेकी ही वेलमीयां खातीहै, परंतु हे न्नोले जीव जेकर तेने अष्ट कर्मके १४८ एकसौ अम्तालीस न्नेद जाने होते, तो अपने विचारे ईश्वरकों काहेको जगत कर्त्ता रूप कलंक देके तिसके ईश्वरत्वकी हानी करता. क्योंकि जो जो कल्पना न्नोले लोकोनें ईश्वरमें करी है, सो सो सर्व कर्मद्वारा सिद्ध होती है, तिन कर्मोका स्वरूप संक्षेप मात्र यहां लिखते है, जेकर विशेष करके कर्म स्वरूप जाननेकी इछा होवे तदा षट्कर्म ग्रंथ १ कर्म प्रकृति प्राभृत २ पंचसंग्रह ३ शतक ४ प्रमुख ग्रंथ देख लेने, प्रथम जैनमतमें कर्म किसेकों कहते

होतेहै, और मरतेहै तिन जीवांके शरीरोंका पिं-
डही पृथ्वीहै. जो कोइ प्रमाणवेत्ता ऐसे समझ-
ताहै के कार्य रूप होनेसें पृथ्वी एक दिनतो अ-
वश्य सर्वथा नाश होवेगी, घटवत्. उत्तर–जैसा
कार्य घटहै तैसा कार्य पृथ्वी नहीहै, क्योंकि घ
टमें घटपणे उत्पन्न होनेवाले नवीन परमाणु नही
आतेहै, और पृथ्वीमें तो सदा पृथ्वी शरीरवाले
जीव असंख उत्पन्न होतेहै, और पूर्वले नाश हो-
तेहै. तिन असंख जीवांके शरीर मिलने और वि-
छडनेसे पृथ्वी तैसीही रहेगी. जैसें नदीका पाणी
अगला २ चला जाता है; और नवीन नवीन आ
नेसें नदी वैसीही रहती है, इस वास्ते घटरूप कार्य
समान पृथ्वी नही है, इस वास्ते पृथ्वी सदाही
रहेगी और तिसके उपर जो रचना है; सो पूर्वोक्त
पांच कारणोंसें सदा होती रहेगी. इस वास्ते
पृथ्वी अनादि अनंत काल तक रहेगी, इस वास्ते
पृथ्वीका कर्त्ता ईश्वर नही है, और जो कितनेक
लोकें जीव मनुष्य १ पशु २ पृथ्वी ३, पवन ४,
वनस्पतिकों तथा चंद्र, सूर्यकों देखके और मनु-

ष्य पशुयोंके शरीरकी हड्डीयांकी रचना आंखके पम्दे खोपरीके टुकम्रे नशा जालादि शरीरोंकी विचित्र रचना देखकें हेरान होतेहै, जव कुछ आगा पीछा नही सूझताहै, तव हार कर यह कह देतेहै, यह रचना ईश्वरके विना कौन कर सक्ता है; इस वास्ते ईश्वर कर्त्ता २ पुकारते है; परंतु जगत् कर्त्ता माननेसें ईश्वरका सत्यानाश कर देते है, सो नही देखतेहै. काणी हथनी एक पासेकी ही वेलम्रीयां खातीहै, परंतु हे न्नोले जीव जेकर तेने अष्ट कर्मके १४८ एकसौ अम्रतालीस न्नेद जाने होते, तो अपने विचारे ईश्वरकों काहेको जगत कर्त्ता रूप कलंक देके तिसके ईश्वरत्वकी हानी करता. क्योंकि जो जो कल्पना न्नोले लोकोनें ईश्वरमें करी है, सो सो सर्व कर्मद्वारा सिद्ध होती है, तिन कर्मोका स्वरूप संक्षेप मात्र यहां लिखते है, जेकर विशेष करके कर्म स्वरूप जाननेकी इछा होवे तदा पट्कर्म ग्रंथ १ कर्म प्रकृति प्राभृत २ पंचसंग्रह ३ शतक ४ प्रमुख ग्रंथ देख लेने, प्रथम जैनमतमें कर्म किसेकों कहते

तिसका स्वरूप लिखते है.

जैसें तेलादिसें शरीर चोपम्नीने कोइ पुरुष नगरमें फिरे, तव तिसके शरीर ऊपर सूक्ष्म रज पम्नेंसें तेलादिके संयोगसें परिणामांतर होके मल रूप होके शरीरसें चिप जाती है, तैसेही जीवांके जीवहिंसा १ जुठ २ चोरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ क्रोध ६ मान ७ माया ८ लोन्न ९ राग १० द्वेष ११ कलह १२ अन्याख्यान १३ पैशुन १४ परपरिवाद १५ रतिअरति १६ मायामृषा१७ मिथ्यादर्शन शल्य १८ रूप जो अंतःकरणके परिणाम है. वे तेलादि चीकास समान है, तिनमें जो पुजल जम्रूप मिलताहै, तिसकों वासना रूप सूक्ष्म कारमण शरीर कहतेहै; यह शरीर जीवके साथ प्रवाहसें अनादि संयोग सबंधवाला है; इस शरीरमें असंख तरेंकी पाप पुण्य रूप कर्म प्रकृति समा रही है. इस शरीरको जैनमतमें कर्म कर्म कहते है. और सांख्यमतवाले प्रकृति, और वेदांति माया, और नैयायिक वैशेषिक अदृष्ट कहते. कोइक मतवाले क्रियमाण संचित प्रारब्ध-

रूप भेद करते है, बौद्ध लोक वासना कहते है, विना समझके लोक इन कर्मोको ईश्वरकी लीला कुदरत कहतेहै, परंतु कोइ मतवाला इन कर्मोंका यथार्थ स्वरूप नही जानता है, क्योंकि इनके मतमें कोइ सर्वज्ञ नही हुआ है, जो यथार्थ कर्मोंका स्वरूप कथन करे; इस वास्ते लोक भ्रम अज्ञानके वश होकर अनेक मनमानी ऊतपटंग जगत कर्त्तादिककी कल्पना करके, अंधाधुंध पंथ चलाये जातेहै, इस वास्ते भव्य जीवांके जानने वास्ते आठ कर्मका किंचित् स्वरूप लिखते है. ज्ञानावरणीय १ दर्शनावरणीय २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयु ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ इनमेसें प्रथम ज्ञानावरणीयके पांच भेदहै; मति ज्ञानावरणीय १ श्रुतज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानावरणीय ३ मनःपर्यायज्ञानावरणीय ४ केवलज्ञानावरणीय ५. तहां पांच इंद्रिय और छठा मन इन छहों द्वारा जो ज्ञान उत्पन्न होवे, तिसका नाम मतिज्ञान है. तिस मतिज्ञानके तीनसौ छत्तीस ३३६ भेदहै. वे सर्व कर्मग्रंथकी वृत्तिसें जा

नने. तिन सर्व ३३६ भेदांका आवरण करनेवाला मतिज्ञानावरण कर्मका भेदहै, जिस जीवके आवरण पतला हुआहै. तिस जीवकी वहुत बुद्धि निर्मलहै; जैसें जैसे आवरणके पतलेपणेकी तारतम्यताहै, तैसें तैसें जीवांमे बुद्धिकी तारतम्यताहै. यद्यपि मतिज्ञान मतिज्ञानावरणके क्षयोपशमसें होताहै, तोभी तिस क्षयोपशमके निमित्त मस्तक, शिर, विशाल मस्तकमे भेजा, चरबी, चोकास, मांस, रुधिर, निरोग्य हृदय, दिल निरुपद्रव, और सूंठ, ब्राह्मी वच, घृत, दूध, शाकर, प्रमुख अच्छी वस्तुका खानपानादिसें अधिक अधिकतर मतिज्ञानावरणके क्षायोपशमके निमित्त है; और शील संतोष मद्दा व्रतादि करणी, और पठन करानेवाला विद्यावान् गुरू, और देश काल श्रद्धा, उत्साह, परिश्रमादि ये सर्व मतिज्ञानावरणके क्षायोपशम होनेके कारणहै. जैसें जैसें जीवांकों कारण मिलतेहै तैसी तैसी जीवांकी बुद्धि होतीहै. इत्यादि विचित्र प्रकारसें मतिज्ञानावरणीका भेदहै. इति मतिज्ञानावरणी १. दूसरा

श्रुतज्ञानावरण श्रुतज्ञानका आवरण श्रुतज्ञान, तिसकों कहतेहै, जो गुरु पासों सुनके ज्ञान होवे और जिसके वससें अन्य जीवांकों कथन करा जावे, तिसके निमित्त पूर्वोक्त मति ज्ञानवाले जानने, क्योंके ये दोनो ज्ञान एक साथही उत्पन्न होतेहै; परं इतना विशेषहै; मतिज्ञान वर्त्तमान विषयिक होता है, और श्रुतज्ञान त्रिकाल विषय होताहै; श्रुतज्ञानके चौदह १४ तथा वीस जेद२० है, तिनका स्वरूप कर्मग्रंथसें जानना. पठन पाठनादि जो अक्षरमय वस्तुका ज्ञानहै, सो सर्व श्रुतज्ञानहै, तिसका आवरण आछादन जो है, जिसकी तारतम्यतासें श्रुतज्ञान जीवांकों विचित्र प्रकारका होताहै, तिसका नाम श्रुतज्ञानावरणीय है. इसकै क्षायोपशमके वेही निमित्तहै, जौनसें मतिज्ञानके है; इति श्रुतज्ञानावरण २. तीसरा अवधिज्ञानका आवरण अवधिज्ञानावरणीय ३. ऐसेंही मनःपर्यायज्ञानावरण ४. केवलज्ञानावरण ५, इन पांचों ज्ञानोमेंसें पिछले तीन ज्ञान इस कालके जीवांकों नहीहै; सामग्री और साधनके

अन्नावसें. इस वास्ते इनका स्वरूप नंदी आदि सिद्धांतोसें जानना. ये पांच भेद ज्ञानावरण कर्मके है. यह ज्ञानावरणकर्म जिन कर्त्तव्योंसें बांधता है, अर्थात् उत्पन्न करके अपने पांचों ज्ञान शक्तियोंका आवरण कर्त्ता है सो येहहै, मति, श्रुत प्रमुख पांच ज्ञानकी १ तथा ज्ञानवंतकी २ तथा ज्ञानोपकरण पुस्तकादिकी ३ प्रत्यनीकता अर्थात् अनिष्टपणा प्रतिकुलपणा करे, जैसें ज्ञान और ज्ञानवंतका बुरा होवे तैसें करे १; जिस पासों पढा होवे तिस गुरुका नाम न बतावे, तथा जानी हूइ वस्तुकों अजानी कहे २; ज्ञानवंत तथा ज्ञानोपकरणका अग्निशस्त्रादिकसें नास करे ३; तथा ज्ञानवंत ऊपर तथा ज्ञानोपकरण ऊपर प्रद्वेष अंतरंग अरुची मत्सर ईर्ष्या करे ४; पढनेवालोंको अन्न वस्त्र वस्ती देनेका निषेध करें, पढनेवालोंको अन्य काममें लगावे, वातोंमें लगावे, पठन विछेद करे ५; ज्ञानवंतकी अति अवज्ञा करे, यह हीन जाति वालाहै, इत्यादि मर्म प्रगट करनेके वचन बोले, कलंक देवे, प्राणांत कष्ट देवे, तथा आचार्य

उपाध्यायकी अविनय मत्सर करे, अकालमे स्वाध्याय करे, योगोपधान रहित शास्त्र पढे, अस्वाध्यायमें स्वाध्याय करे, ज्ञानके उपकरण पास हूयां दिसा मात्रा करे, ज्ञानोपकरणको पग लगावे, ज्ञानोपकरण सहित मैथुन करे, ज्ञानोपकरणकों थूंक लगावे. ज्ञानके द्रव्यका नाश करे, नाश करतेको मना करे, इन कामोंसें ज्ञानावरणीय पंच प्रकारका कर्म बांधे; तिसके उदय क्षयोपशमसें नाना प्रकारकी बुद्धिवाले जीव होते महाव्रत संयम तपसें ज्ञानावरणीय कर्म क्षय करे, तव केवलज्ञानी सर्व वस्तुका जाननें वाला होवे, इति प्रथम ज्ञानावरणी कर्मका संक्षेप मात्र स्वरूप. १

अथ दूसरा दर्शनावरणीय कर्म तिसके नव ए भेदहै. चक्षुदर्शनावरण १ अचक्षुदर्शनावरण २ अवधिदर्शनावरण ३ केवलदर्शनावरण ४ निद्रा ५ निद्रानिद्रा ६ प्रचला ७ प्रचला प्रचला ८ स्त्यानर्द्धी ए. अब इनका स्वरूप लिखतेहै. सामान्य रूप करके अर्थात् विशेष रहित वस्तुके जाननेकी जो आत्माकी शक्तिहै तिसकों दर्शन कहते है, तिनमें

नेत्रांकी शक्तिकों आवरण करे सो चक्षुदर्शनावरणीय कर्मका भेदहै; इसके क्षयोपशमकी विचित्रतासें आंखवाले जीवोंकी आंखद्वारा विचित्र तरेंकी दृष्टि प्रवर्त्ते है, इसके क्षयोपशम होनेमें विचित्र प्रकारके निमित्त है, इति चक्षुदर्शनावरणीय १. नेत्र वर्जके शेष चारों इंद्रियोकों अचक्षु दर्शन कहते हैं, तिनके सुनने, सूंघने, रस लेने, स्पर्श पिछाननेका जो सामान्य ज्ञानहै सो अचक्षु दर्शनहै; चारो इंद्रियोंकी शक्तिका आछादन करने वाला जो कर्म है तिसको अचक्षु दर्शन कहते है, इसके क्षयोपशम होनेमें अंतरंग बहिरंग विचित्र प्रकारके निमित्तहै, तिन निमित्तोंद्वारा इस कर्मका क्षय उपशम जैसा जैसा जीवांके होता है तैसी तैसी जीवोंकी चार इंद्रियकी स्व स्व विषयमें शक्ति प्रगट होती है, इति अचक्षुदर्शनावरणी २. अवधि दर्शनावरणीय, और केवलदर्शनावरणीयका स्वरूप शास्त्रसें देख लेनां; क्योंकि सामग्रीके अभावसें ये दोनो दर्शन इस कालक्षेत्रके जीवांकों नही है, एवं दर्शनावरणीयके चार

भेद हुए ४. पांचमा भेद निद्रा जिसके उदयसें सुखें जागे सो निद्रा १ जो बहुत हलाने चलानेसें जागे सो निद्रा निद्रा २ जो बैठेकों नींद आवे सो प्रचला ३ जो चलतेकों आवे सो प्रचला प्रचला ४ जो नींदमें उठके अनेक काम करे नींदमें शरीरमें बल बहुत होवे है, तिसका नाम स्त्यानर्द्धि निद्राहे ५. पांच इंद्रियांकें ज्ञानमे हानि करती है, इस वास्ते दर्शनावरणीयकी प्रकृति है, एवं ए भेद दर्शनावरणीय कर्मके हुए, इस कर्मके बांधनेके हेतु ज्ञानावरणीयकी तरे जानने, परं ज्ञानकी जगे दर्शन पद कहनां, दर्शन चक्षु अचक्षु आदि, दर्शनी साधु आदि जीव, तिनकी पांच इंद्रियाका बुरा चिंते, नाश करे अथवा सम्मति तत्वार्थ द्वादशार नयचक्रवाल तर्कादि दर्शन प्रभावक शास्त्रके पुस्तक तिनका प्रत्यनीकपणादि करे तो दर्शनावरणीय कर्मका बंध करे, इति दूसरा कर्म २.

अथ तीसरा वेदनीय कर्म तिसकी दो प्रकृतिहै; साता वेदनीय १ असाता वेदनीय २

साता वेदनीयसें शरीरकों अपने निमित्तद्वारा सुख होताहै; और असाता वेदनीयके उदयसें दुःख प्राप्त होता है. एवं दो भेदोंके बांधनेके कारण प्रथम साता वेदनीयके बंध करणेके कारण गुरु अर्थात् अपने माता पिता धर्माचार्य इनकी भक्ति सेवा करे १ क्षमा अपने सामर्थके हुए दूसरायोंका अपराध सहन करना २ परजीवांकों दुखी देखके तिनके दुःख मेटनेकी वांछा करे ३ पंचमहाव्रत अनुव्रत निर्दूषण पाले ४ दश विध चक्रवाल समाचारी संयम योग पालनेसें ५ क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इनके उदय आया इनको निष्फल करे ६ सुपात्र दान, अभय दान, देता सर्व जीवां उपर उपकार करे; सर्व जीवांका हित चिंतन करे ७ धर्ममें स्थिर रहे, मरणांत कष्टकेभी आये, धर्मसें चलायमान न होवे, बाल वृद्ध रोगीकी वैयावृत्त करतां धर्ममें प्रवर्त्ततां सहाय करे, चैत्य जिन प्रतिमाकी अछी भक्ति करतां सराग संयम पाले; देशव्रतीपणा पाले, अकाम निर्जरा अज्ञान तप करें, सौच्य स

त्यादि सुंदर अंतःकरणकी वृत्ति प्रवर्त्तावे तो साता वेदनीय कर्म बांधे, इति साता वेदनीयके बंध हेतु कहे १ इनसें विपर्यय प्रवर्त्ते तो असाता वेदनीय बांधे २ इति वेदनीय कर्म स्वरूप ३.

अथ चोथा मोहनीय कर्म तिसके अठावीस भेद हैं, अनंतानुबंधो क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ अप्रत्याख्यान क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८ प्रत्याख्यानावरण क्रोध ९ मान १० माया ११ लोभ १२ संज्वलका क्रोध १३ मान १४ माया १५ लोभ १६ हास्य १७ रति १८ अरति १९ शोक २० भय २१ जुगुप्सा २२ स्त्रीवेद २३ पुरुषवेद २४ नपुंसकवेद २५ सम्यक्त मोहनीय २६ मिश्र मोहनीय २७ मिथ्यात्व मोहनीय २८. अथ इनका स्वरूप लिखतेहैं; प्रथम अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ जां तक जीवे तां तक रहे; छटे नही तिनमेसें अनंतानुबंधी क्रोध तो ऐसाकि जाव जीव सुधी क्रोध न छोडे, अपराधी कितनो आधीनगी करे तोंभी क्रोध न छोडे, यह क्रोध ऐसाहै जेसे पर्वतका फटना फेर कदापि न मिले

मान पत्थरके स्तंभ समान किंचित् मात्रभी न नमे, माया कठिन वांसकी जम समान सूधी न होवे, लोभ कृमिके रंग समान फेर उतरे नही. ये चारों जिसके उदयमें होवे सो जीव मरके नरकमें जाता है; और इस कषायके उदयमें जीवांकों सच्चे देवगुरु धर्मकी श्रद्धा रूप सम्यक्त नही होता है; ४ दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय तिसकी स्थिति एक वर्षकी है. एक वर्ष तक क्रोध मान माया लोभ रहै तिनमें क्रोधका स्वरूप पृथ्वीके रेखा फाटने समान बमे यतनसें मिले, मान हामके स्तंभ समान मुसकलसें नमे, माया मिंढेके सींगके वल समान सिधा कठनतासें होवें; लोभ नगरकी मोरीके कीचमके दाग समान, इस कषायके उदयसें देश व्रतीपणा न आवे और मरके पशु तीर्यंचकी गतिमें जावे ८ तीसरी प्रत्याख्यानावरण कषाय तिसकी स्थिति चार मासकी है. क्रोध वालुको रेखा समान, मान काष्टके स्तंभे समान, माया वैलके मूत्र समान वांकी, लोभ गामीके खंजन समान, इसके उदयसे शुध साधु

नही होताहै ऐसा कषायवाला मरके मनुष्य हो-
ताहै १२ चौथी संज्वलनकी कषाय, तिसकी
स्थिति एक पक्षकी. क्रोध पाणीकी लकीर समा
न, मान वांसकी शींखके स्तंभे समान, माया,
वांसकी छिल्लक समान, लोभ हलदीके रंग स-
मान, इसके उदयसें वीतराग अवस्था नही होती
है. इस कषायवाला जीव मरके स्वर्गमें जाताहै
१६ जिसके उदयसें हासी आवे सो हास्य प्रकृति
१७ जिसके उदयसें चित्तमें निमित्त निर्निमितसें
रति अंतरमें खुशी होवे सो रति १८ जिसके उ-
दयसें चित्तमे सनिमित्त निर्निमित्तसें दिलगीरी
उदासी उत्पन्न होवें सो अरति प्रकृति १९ जिस-
के उदयसें इष्ट विजोगादिसें चित्तमें उद्वेग उत्पन्न
होवे सो शोक मोहनीय प्रकृति २० जिसके उ-
दयसें सात प्रकारका भय उत्पन्न होवे सो भय
मोहनीय २१ जिसके उदयसें मलीन वस्तु देखी
सूग उपजे सो जुगुप्सा मोहनीय २२ जिसके
उदयसें स्त्रीके साथ विषय सेवन करनेकी इछा
उत्पन्न होवे, सो पुरुषवेद मोहनीय २३ जि-

नदयसें पुरुषके साथ विषय सेवनेकी इच्छा नत्पन्न होवे, सो स्त्री वेद मोहनीय २४ जिसके नदयसें स्त्री पुरुष दोनोंके साथ विषय सेवनेकी अभिला षा नत्पन्न होवे, सो नपुंसकवेद मोहनीय, २५ जिसके नदयसें शुद्ध देव गुरु, धर्मकी श्रद्धा न होवे सो मिथ्यात्व मोहनीय २६ जिसके नदयसें शुद्ध देव गुरु धर्म अर्थात् जैनमतके ऊपर राग- नी न होवे, और द्वेषनी न होवे, अन्य मतकीनी श्रद्धा न होवे सो मिश्र मोहनीय २७ जिसके न- दयसें शुद्ध देव गुरु धर्मको श्रद्धातो होवे परंतु सम्यक्तमें अतिचार लगावे सो सम्यक्त मोहनीय २८ इन २८ प्रकृतियोंमें आदिकी २५ पच्चीस प्र- कृतिकों चारित्र मोहनीय कहतेहै, और ऊपलो तीन प्रकृतियोंकों दर्शनमोहनीय कहते है एवं २८ प्रकृति रूप मोहनीय कर्म चौथा है, अथ मोहनीय कर्मके बंध होनेके हेतु लिखते है. प्रथम मिथ्या त्व मोहनीयके बंध हेतु नन्मार्ग अर्थात् जे संसा रके हेतु हिंसादिक आश्रव पापकर्म, तिनकों मोक्ष हेतु कहे तथा एकांत नयसें निःकेवल क्रिया क

ष्टानुष्टानसें मोक्ष प्ररूपे तथा एकांत नयसें निःके वल ज्ञान मात्रसें मोक्ष कहे ऐसेही एकले विनयादिकसें मोक्ष कहै १ मार्ग अर्थात् अर्हत न्नापित सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्ररूप मोक्ष मार्ग तिसमे प्रवर्त्तनेवाले जीवकों कुहेतु, कुयुक्ति, करके पूर्वोक्त मार्गसे भ्रष्ट करे २ देवद्रव्य ज्ञान इ‌‌त्यादिक तिनमें जो न्नगवानके मंदिर प्रतिमादि के काम आवे काष्ट, पाषाण, मृतीकादिक तथा तिस देहरादिके निमित्त करा हुआ रूपा, सोनादि धन तिसका हरण करे; देहराकी न्नूमि प्रमुखकों अपनी कर लेवे, देवकी वस्तुसें व्यापारकरके अपनी आजीवीका करे तथा देवद्रव्यका नाश करे, शक्तिके हुए देवद्रव्यके नाश करनेवालेको हटावे नही, ये पूर्वोक्त काम करनेवाला मिथ्यादृष्टि होताहै, सो मिथ्यात्व मोहनीय कर्मका बंध करता है; तथा दूसरा हेतु तीर्थंकर केवलीके अवर्णवाद बोले, निंदा करे तथा न्नले साधुकी तथा जिन प्रतिमाकी निंदा करे तथा चतुर्विध संघ साधु साधवी श्रावक श्राविकाका समुदाय तिस

की श्रुनज्ञानकी निंदा अवज्ञा हीलना करता हुआ और जिन शासनका उड्डाह करता हुआ अयश करता कराता हुआ निकाचित महा मिथ्यात्व मोहनीय कर्म बांधे. इति दर्शन मोहनीयके बंध हेतु. ॥ अथ चारित्रमोहनीय कर्मके बंध हेतु लिखते है. चारित्र मोहनीय कर्म दो प्रकारका है, कषाय चारित्र मोहनीय १. नोकषाय चारित्र मोहनीय २. तिनमेंसें कषाय चारित्र मोहनोयके १६ सोलां ञ्नेदहे, तिनके बंध हेतु लिखते है. अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोञ्नमे प्रवर्त्ते तो सोलाही प्रकारका कषाय मोहनीय कर्म बांधे. अप्रत्याख्यानमे वर्त्ते तो ऊपख्या बांरां कषाय बांधे. प्रत्याख्यानमें प्रवर्त्ते तो ऊपख्या आठ कषाय बांधे, संज्वलनमें प्रवर्त्ते तो चार संज्वलनका कषाय बांधे. इति कषाय चारित्र मोहनोयके बंध हेतु. नोकषाय हास्यादि तिनके बंध हेतु यह है, प्रथम हास्य हांसी करे, ञ्नांम कुचेष्टा करे, वहुत बोले तो हास्य मोहनीय कर्म बांधे १ देश देखनेके रससें, विचित्र क्रीमाके रससें, अति वाचाल हो·

नेसें कामण मोहन टूणा वगेरे करे, कुतुहल करे तो रति मोहनीय कर्म बांधे २. राज्य नेद करे, नवीन राजा स्थापन करे, परस्पर लमाइ करावे, दूसरायोंकों अरति उच्चाट उत्पन्न करे, अशुन्न काम करने करानेमें उत्साह करे, और शुन्न कामके उत्साहकों नांजे, निष्कारण आर्त्तध्यान करे तो अरति मोहनीय कर्म बांधे ३. परजीवोंकों त्रास देवे तो, निर्दय परिणामी नय मोहनीय कर्म बांधे ४. परकों शोक चिंता संताप उपजावे, तपावे तो शोक मोहनीय कर्म बांधे ५. धर्मी साधु जनोकी निंदा करे; साधुका मलमलीन गात्र देखि निंदा करे तो जुगुप्सा मोहनीय कर्म बांधे ६. शब्द रूप, रस, गंध, स्पर्शरूप, मनगती विषयमें अत्यंताशक्त होवे, दूसरेकी इर्षा करे, माया मृषा सेवे, कुटिल परिणामी होवे, पर स्त्रीसें नोग करे तो जीव स्त्रीवेद मोहनीय कर्म बांधे ७. सरल होवे, अपनी स्त्रीसें उपरांत संतोषी होवे, इर्षा रहित मंद कषायवाला जीव पुरुषवेद बांधे० तीव्र कषायवाला, दर्शनी दूसरे मतवालोंका शील

भंग करे, तीव्र विषयी होवे, पशुकी घात करे, मिथ्यादृष्टी जीव नपुंसकवेद बांधे ए. संयमीके दूषण दिखावे, असाधुके गुण बोले, कषायकी उदीरणा करता हुआ जीव चारित्र मोहनीय कर्म समुच्चय बांधे. इति मोहनीय कर्म बंध हेतु. यह मोहनीय कर्म मदिरेके नशेकी तरें अपने स्वरूपसें भ्रष्ट कर देताहै. इति मोहनीय कर्मका स्वरूप संक्षेप मात्रसें पुरा हुआ ४.

अथ पांचमा आयुकर्म, तिसकी चार प्रकृति जिनके उदयसें नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३ देव ४ नवमें खैंचा हुआ जीव जावे है, जैसें चमकपाषाण लोहकों आकर्षण करता है, तिसका नाम आयुकर्म. नरकायु १ तिर्यंचायु २ मनुष्यायु ३ देवायु ४ प्रथम नरकायुके बंध हेतु कहतेहै. महारंन चक्रवर्त्ती प्रमुखकी ऋद्धि नोगनेमें महा मूर्छा परिग्रह सहित, व्रत रहित अनंतानुबंधी कषायोदयवान् पंचेंद्रिय जीवकी हिंसा निशंक होकर करे, मदिरा पीवे, मांस खावे, चौरी करे, जुया खेले, परस्त्री और वेस्या गमन करे, शिकार

मारे, कृतघ्नी होवे, विश्वासघाती, मित्र द्रोही, उत्सूत्र प्ररूपे, मिथ्यामतकी महिमा वढावे, कृष्ण नील, कापोत लेश्यासें अशुन्न परिणामवाला जोव नरकायु बांधे १ तिर्यंचकी आयुके बंध हेतु यह है. गूढ हृदयवाला, अर्थात् जिसके कपटकी किसीकों खवर न पमे, धूर्त होवे, मुखसें मीठा बोले, हृदयमें कतरणी रखे, जूठे दूषण प्रकाशे, आर्त्तध्यानी इस लोकके अर्थे तप क्रिया करे, अपनी पूजा महिमाके नष्ट होनेके न्नयसें कुकर्म करके गुरुआदिकके आगे प्रकाशे नही, जूठ बोले, कमती देवे, अधिक लेवे, गुणवानको इर्षा करे, आर्त्तध्यानी कृष्णादि तीन मध्यम लेश्यावाला जीव तिर्यंच गतिका आयु बांधे. इति तिर्यंचायु २ अथ मनुष्यायुके बंधहेतु मिथ्यात्व कषायका स्वन्नावेही मंदोदयवाला प्रकृतिका न्नद्रिक धूल रेखा समान कषायोदयवाला सुपात्र कुपात्रकी परीक्षा विना विशेष यश कीर्त्तिकी वांछा रहित दान देवे, स्वन्नावे दान देनेकी तीव्र रुचि होवे, क्षमा, आर्जव, मार्दव, दया, सत्य शौचादिक

में वर्त्ते, सुसंवोध्य होवे, देव गुरुका पूजक, पूजा-
प्रिय कापोत लेश्याके परिणामवाला मनुष्य ति-
र्यंचादि मनुष्यायु वांधे २ अथ देव आयु अविरति
सम्यगदृष्टि मनुष्य तीर्यंच देवताका आयु वांधे,
सुमित्रके संयोगसें धर्मकी रुचिवाला देशविरति
सरागसंयमी देवायु वांधे, वालतप अर्थात् दुःख-
गर्भित, मोहगर्भित वैराग्य करके दुष्कर कष्ट पं-
चाग्नि साधन रस परित्यागसें, अनेक प्रकारका
अज्ञान तप करनेसें निदान सहित अत्यंत रोष
तथा अहंकारसें तप करे, असुरादि देवताका आयु
वांधे तथा अकाम निर्जरा अजाणपणे भूख, तृषा,
शीत, उष्ण रोगादि कष्ट सहनेसें स्त्री अन मिलते
शील पाले, विषयकी प्राप्तिके अभावसें विषय न
सेवनेसें इत्यादि अकाम निर्जरासें तथा वाल म-
रण अर्थात् जलमें डूव मरे, अग्निसें जल मरे,
झंपापातसें मरे, शुभ परिणाम किंचितवाला तो
व्यंतर देवताका आयु वांधे, आचार्यादिकको अ-
वज्ञा करे तो, किल्विष देवताका आयु वांधे, तथा
मिथ्यादृष्टीके गुणांकी प्रशंसा करे, महिमा वढा

वे, अज्ञान तप करे, और अत्यंत क्रोधी होवे तो, परमाधार्मिकका आयु बांधे. इति देवायुके बंधहेतु. यह आयु कर्म हडिके बंधन समान है. इसके उदयसें चारों गतके जीव जीवते है, और जब आयु पूर्ण होजाता है तब कोइभी तिसकों नही जीवा सक्ता है, जेकर आयुकर्म विना जीव जीवे तो मतधारीयोंके अवतार पैगंबर क्यों मरते ? जितनी आयु पूर्व जन्ममें जीव बांधके आया है तिससें एक क्षण मात्रभी कोइ अधिक नही जीव सक्ता है, और न किसीकों जीवा सक्ता है. मतधारी जो कहते है हमारे अवतारादिकनें अमुक अमुककों फिर जीवता करा, यह बाते महा मिथ्याहै, क्योंकि जेकर उनमें ऐसी शक्ति होतीतो आप क्यों मर गये. ? सदा क्यों न जीते रहे ? ईशा महम्मदादि जेकर आज तक जीते रहतेतो हम जानतें ये सच्चे परमेश्वरकी तर्फसें उपदेश करने आये है. हम सब उनके मतमें हो जाते. मत धारीयोंकों मेहनत न करनी पडती, जब साधारण मनुष्योंके समान मर गये तब क्योंकर शक्तिमान

होसक्तेहै १ ये सर्व जूगी वातोंकी अणघरू गप्पे जंगली गुरुयोंने जंगलीपणेसें मारीहै, इस वास्ते सर्व मिथ्याहै. इति आयु कर्म पंचमा.

अथ छठा नाम कर्म, तिसका स्वरूप लिखतेहै. तिसके ए३ तिरानवे नेदहै. नरकगति नाम कर्म १ तिर्यंच गति नाम २ मनुष्य गति नाम ३ देवगति नाम ४ एकेंडिय जाति १ द्वींडिय जाति२ तीनेंडिय जाति ३ चार इंडिय जाति ४ पंचेंडिय जाति ५ एवं ए ऊदारिक शरीर १० वैक्रिय शरीर ११ आहारिक शरीर १२ तैजस शरीर १३ कार्मण शरीर १४ ऊदारिकांगोपांग १५ वैक्रियांगोपांग १६ आहारिकांगोपांग १७ ऊदारिकवंधन १० वैक्रिय बंधन १ए आहारिक वंधन २० तैजस वंधन २१ कार्मण वंधन २२ . ऊदारिक संघातन २३ वैक्रिय संघातन २४ आदारिक संघातन २५ तैजस संघातन २६ कार्मण संघातन २७ वज्र ऋपन्न नराच संहनन २७ ऋपन्न नराच संहनन २ए नराच संहनन ३० अर्द्ध नराच संहनन ३१ 'लिका संहनन ३२ छेवर्त्त संहनन ३३ सम च

तुरस्त्र संस्थान ३४ निग्रोध परिमंग्ल संस्थान ३५ सादिया संस्थान ३६ कुब्ज संस्थान ३७ वामन संस्थान ३७ हुंम्रक संस्थान ३ए कृश्न वर्ण ४० नील वर्ण ४१ रक्त वर्ण ४२ पीत वर्ण ४३ शुक्ल वर्ण ४४ सुगंध ४५ डुर्गंध ४६ तिक्त रस ४७ कटुक रस ४७ कषाय रस ४ए आम्ल रस ५० मधुर रस ५१ कर्कश स्पर्श ५२ मृडु स्पर्श ५३ हलका ५४ न्नारी ५५ शीत स्पर्श ५६ उष्ण स्पर्श ५७ स्निग्ध स्पर्श ५७ रुक्ष स्पर्श ५ए नरकानुपूर्वी ६० तिर्यंचानुपूर्वी ६१ मनुष्यानुपूर्वी ६२ देवानुपूर्वी शुन्नविहायगति ६४ अशुन्नविहायगति ६५ परघात नाम ६६ उत्स्वास ६७ आतप ६७ उद्योत नाम ६ए अगुरु लघु ७० तीर्थंकर नाम ७१ निर्माण७२ उपघात नाम ७३ त्रसनाम ७४ बादर नाम ७५ पर्याप्त नाम ७६ प्रत्येकनाम ७७ स्थिर नाम ७७ शुन्न नाम ७ए सुन्नग नाम ७० सुस्वर नाम ७१ आदेय नाम ७२ यशकीर्ति नाम ७३ स्थावर नाम सूक्ष्म नाम ७५ अपर्याप्त नाम ७६ साधारण नाम ७७ अस्थिर नाम ८८ अशुन्न नाम ८ए

नाम ए० डुस्वर नाम ए१ अनादेय नाम ए२ अ
यश नाम ए३ ये तिरानवे न्नेद नाम कर्मके हैं.
अब इनका स्वरूप लिखतेहैं. गतिनाम कर्म जिस
कर्मके उदयसें जीव नरक १ तिर्यंच २ मनुष्य ३
देवताकी गति पर्याय पामें, नरकादि नाम कह-
नेमें आवे, और जीव मरे तब जिस गतिका ग-
तिनामकर्म, आयुकर्म मुख्यपणे और गतिनाम
कर्म सहचारी होवे है, तब जीवकों आकर्षण क
रके ले जातेहै, तब वो जीव तिस गति नाम और
आयु कर्मके वश हुआ थका जहां उत्पन्न होना
होवे तिस स्थानमें पहुंचेहै. जैसें मोरेवाली सूइ-
कों चमक पाषाण आकर्षण कर्ताहै और सूइ च
मक पाषाणकी तर्फ जाती है, मोराभी सूइके
साथही जाताहै, इस तरे नरकादि गतियोंका स्थान
चमक पाषाण समान है, आयु कर्म और गतिना
म कर्म लोहकी सूइ समान हैं, और जीव मोरे
समान है बीचमें पोया हुआहै, इस वास्ते परभ-
वमें जीवकों *आयु और गतिनाम कर्म ले जातेहै,*
जैसा २ गतिनाम कर्मका जीवांने बंध करा है,

शुभ वा अशुभ तैसी गतिमें जीव तिस कर्मके उदयसें जा रहता है, इस वास्ते जो अज्ञानी-योने कल्पना कर रक्खी है कि पापी जीवकों यम और धर्मी जीवकों स्वर्गके दूत मरा पीछे ले जातेहै तथा जवराइल फिरस्ता जीवांकों ले जाता है, सो सर्व मिथ्या कल्पना है, क्योंकि जव यम और स्वर्गीय दूत फिरस्ते मरते होगे, तव तिनकों कौन ले जाता होवेंगा, और जीवतो जगतमें एक साथ अनंते मरते और जन्मते, तिन सबके लेजाने वास्ते इतने यम कहांसे आते होवेंगे, और इतने फिरस्ते कहां रहते होवेंगे ? और जीव इस स्थूल शरीरसें निकला पीछे किसीकेभी हाथमें नही आताहै, इस वास्ते पूर्वोक्त कल्पना जिनोंने सर्वज्ञका शास्त्र नही सुना है तिन अज्ञानीयोंने करीहै. इस वास्ते मुख्य आयुकर्म और गतिनाम कर्मके उदयसेंही जीव परभवमें जाताहै. इति गतिनाम कर्म ४. अथ जातिनाम कर्मका स्वरूप लिखते है. जिसके उदयसें जीव पृथ्वी, पाणी, अग्नि, पवन, वनस्पतिरूप एकेंद्रिय, स्पर्शेंद्रियवा

ले जीव उत्पन्न होतेहै, सो एकेंद्रिय जातिनाम कर्म १ जिसके उदयसें दोइंद्रियवाले कृम्यादिपणे उत्पन्न होवे, सो द्वींद्रिय जातिनाम कर्म २ एवं तीनेंद्रि कीमीआदि, चतुरिंद्रिय भ्रमरादि, पंचेंद्रिय नरक पंचेंद्रिय पशु गोमहिष्यादि मनुष्य देवतापणे उत्पन्न होवे, सो पंचेंद्रिय जातिनाम कर्म. एवं सर्व ए उदारिक शरीर अर्थात् एकेंद्रिय, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय, पंचेंद्रिय, तिर्यंच मनुष्यके शरीर पावनेको तथा ऊदारीक शरीरपणे परिणामकी शक्ति, तिसका नाम ऊदारिक शरीर नाम कर्म १० जिसकी शक्तिसें नारकी देवताका शरीर पावे, जिससें मन इच्छित रूप बणावे तथा वैक्रिय शरीरपणे पुद्गल परिणामनेकी शक्ति सौ वैक्रिय शरीरनाम कर्म ११ एवं आहारिक लब्धी वालेके शरीरपणे परिणामावे १२ तैजस शरीर अंदर शरीरमें उष्णता, आहार पचावनेकी शक्तिरूप, सो तैजस नाम कर्म १३ जिसकी शक्तिसें, कर्मवर्गणाकों अपने अपने कर्म प्रकृतिके परिणामपणे परिणामावे सो कार्मण शरीर नाम कर्म

१४ दो वाहु २ दो साथल ४ पीठ ५ मस्तक ६ ऊरुगती ७ ऊदर पेट।८। ये आठ अंग और अंगोके साथ लगा हुआ, जैसें हाथसें लगी। अंगुली साथलसें लगा जानु, गोडा आदि इनका नाम ऊपांग है, शेष। अंगुलीके पर्व रेखा रोम नखादि प्रमुख अंगोपांगहै; जिसके ऊदयसें ये अंगोपांग पावे और इनपणे नवीन पुद्गल परिणमावे ऐसी जो कर्मकी शक्ति तिसका नाम ऊपांग नाम कर्महै. ऊदारीकोपांग १५ वैक्रियोपांग, १६ आहारिकोपांग, १७ इति ऊपांग नामकर्म ॥ पूर्वे बांध्या हुआ ऊदारिक शरीरादि पांच प्रकृति और इन पांचोके नवीन बंध होतेको पिछले साथ मेलकरके बधावे जैसे राल लाखादि दो वस्तुयोंकों मिला देते है, तैसेही जो पूर्वापर कर्मको संयोग करे, सो बंधन नाम कर्म शरीरोंके समान पांच प्रकारका है. ऊदारिक बंधन वैक्रियबंधन इत्यादि एवं, २२ प्रकृति हुइ. पांच शरीरके योग्य विखरे हुए पुद्गलांको एकठे करे, पीछे बंधन नामकर्म बंध करे, तिस एकठे करणेवाली कर्म प्रकृतिका नाम संघातन नामक

र्म है, सो पांच प्रकारका है, उदारिक संघातन, वैक्रिय संघातन इत्यादि एवं, २७ सत्ताइस प्रकृति हुइ, अथ उदारिक शरीरपणे जो सात धातु परिणमी है तिनमें हाडकी संधिको जो दृढ करे सो संहनन नामकर्म, सो ७ ६ प्रकारका है, तिनमेंसे जहां दोनो हाड दोनों पासे मर्कट बंध होवे, तिसका नाम नराच है, तिन दोनो हाडोंके ऊपर तीसरा हाड पट्टेकी तरें जकड बंध होवे तिसका नाम ऋषभ है, इन तीनो हाडके भेदनेवाली ऊपर खीली होवे तिसका नाम वज्रहै, ऐसी जिस कर्मके उदयसें हाडका संधी दृढ होवे तिसका नाम वज्रऋषभ नराच संहनन नामकर्म है. २८ जहां दोनों हाडोंके छेहडे मर्कटबंध मिले हुए होवे, और उनके उपर तीसरे हाडका पट्टा होवे, ऐसी हाड संधी जिस कर्मके उदयसें होवे सो ऋषभ नराच संहनन नामकर्म २९ जिन हाडोंका मर्कटबंध तो होवे परंतु पट्टा और कीली न होवे, जिसके उदयसें सो नाराच संहनन नामकर्म, ३० जहां एक पासे मर्कटबंध और दूसरे पासे खीली

होवे जिस कर्मके उदयसें सो अर्द्ध नराच संहनन नाम कर्म ३१ जैसें खीलीसें दो काष्ट जोमे होवे तैसें हामकी संधी जिस कर्मके उदयसें होवे, सो कीलिका संहनन नामकर्म ३२ दोनो हामोंके छेहमे मिले हुए होवे जिस कर्मसें सो सेवार्त्त संहनन नामकर्म ३३ जिस कर्मके उदयसें सामुद्रिक शास्त्रोक्त संपूर्ण लक्षण जिसके शरीरमें होवे तथा चारो अंस वरावर होवे, पलाठी मारके बेठे तव दोनों जानुका अंतर और दाहिने जानुसें वामास्कंध और वामेजानुसें दाहिनास्कंध और पलाठी पीठसें मस्तक मापता चारों मोरी वरावर होवे, और वत्तीस लक्षण संयुक्त होवे, ऐसा रूप जिस कर्मके उदयसें होवे तिसका नाम सम चतुरस्र संस्थान नामकर्म ३४ जैसें वम वृक्षका ऊपल्या भाग पूर्ण होवेहै, तैसेंही जो नाभीसें ऊपर संपूर्ण लक्षणवाला शरीर होवे और नाभीसें नीचे लक्षण हीन होवे, जिस कर्मके उदयसें सो निग्रोध परिमंमल संस्थान नामकर्म ३५ जिसका शरीर नाभीसें नीचे लक्षणयुक्त होवे, और नाभी

सें ऊपर लक्षण रहित होवे, जिस कर्मके उदय सें सो सादिया संस्थान नामकर्म ३६ जहां हाथ पग मुख ग्रीवादिक उत्तम सुंदर होवे, और हृदय पेट, पूंठ लक्षण हीन होवे जिस कर्मके उदयसें सो कुब्ज संस्थान नामकर्म ३७ जहां हाथ पग लक्षण हीन होवे, अन्य अंग लक्षण संयुक्त अछे होवे, जिस कर्मके उदयसें सो वामन संस्थान नामकर्म ३८ जहां सर्व शरीरके अवयव लक्षण हीन होवे सो हुंमक संस्थान नामकर्म, ३९ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर मषी, स्याही नील समान काला होवे तथा शरीरके अवयव काले होवे सो कृष्णवर्ण नामकर्म ४० जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव सूयकी पुछ तथा जंगाल समान नील अर्थात् हरित वर्ण होवे, सो नीलवर्ण नामकर्म ४१ जिसके उदयसें जीव-का शरीर तथा शरीरके अवयव लाल हिंगलु स-मान रक्त होवे, सो रक्तवर्ण नामकर्म ४२ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अ-वयव पीत हरिताल, हलदी चंपकके फूलसमान

पीले होवे, सो पीतवर्ण नामकर्म ४३ जिस कर्म के उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव संख स्फटिक समान उज्वल होवे, सो शुक्लवर्ण नामकर्म ४४ जिसके उदयसें जीवके शरीर तथा शरीरके अवयव सुरभि गंध अर्थात् कर्पूर, कस्तूरी, फूल सरीखी सुगंधी होवे, सो सुरभीगंध नामकर्म ४५ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीर तथा शरीरके अवयव दुरभिगंध लशुन मृतक शरीर सरीखी दुरभीगंध होवे, सो दुरभिगंध नामकर्म ४६ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव नींव चिरायते सरीखा रस होवे; सो तिक्तरस नामकर्म ४७ जिसके उदयसें जीवका शरीरादि सूंठ, मरिचकी तरे कटुक होवे, सो कटुकरस नामकर्म ४८ जिसके उदयसें जीवका शरीरादि हरड़, बहेड़े समान कसायलारस होवे, सो कसायरस नामकर्म ४९ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादिका रस लिंबू, आम्ली सरीखा खट्टा रस होवे, सो खट्टारस नामकर्म ५० जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरादि खांड, सा

करादि समान रस होवे, सो मधुर रस नामकर्म ५१ इति रस नाम कर्म जिसके उदयसें जीवके शरीरमें तथा शरीरके अवयव कठिन कर्कस गायकी जीन्न समान होवे, सो कर्कस स्पर्श नाम कर्म ५२ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरके अवयव माखणकी तरे कोमल होवे, सो मृडु स्पर्श नामकर्म ५३ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा अवयव अर्क तूलकी तरे हलकें होवे सो लघु स्पर्श नामकर्म ५४ जिसके उदयसें लोहेवत् न्नारी शरीरके अवयव होवे, सो गुरु स्पर्श नामकर्म ५५ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा अवयव हिम वर्फवत् शीतल होवे, सो शीत स्पर्श नामकर्म ५६ जिसके उदयसें जीवका शरीर तथा अवयव उष्ण होवे, सो उष्ण स्पर्श नाम-कर्म ५७ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीर तथा शरीरावयव घृतकी तरे स्निग्ध होवें, सो स्निग्ध स्पर्श नामकर्म ५८ जिस कर्मके उदयसें जीवका शरीरावयव राखकी तरे रूखे होवे, सो रुक्ष स्पर्श नामकर्म ५९ इति स्पर्श नाम कर्म नरक, तिर्यंच,

मनुष्य, देव ए चार जगें जब जीव गति नाम
कर्मके उदयसें वक्र वांकी गति करे, तब तिस जी
वकों वांके जातेको जो अपने स्थानमें ले जावे,
जेसें वैलके नाकमें नाथ तैसें जीवके अंतराल वक्र
गतिमें अनुपूर्वीका उदय तथा जों जीवके हाथ
पगादि सर्व अवयव यथायोग्य स्थानमें स्थापन
करे, सो अनुपूर्वी नामकर्म. सो चार प्रकारका
है, नरकानुपूर्वी १ तिर्यंचानुपूर्वी २ मनुष्यानुपूर्वी
३ देवतानुपूर्वी ४ एवं सर्व ६३ हूइ, जिसके उदय
सें हाथी वृषनकी तरें शुन्न चलनेकी गति होवे,
सो शुन्न विहाय गति ६४ जिस कर्मके उदयसें
ऊंटकी तरें बुरी चाल गति होवे, सो अशुन्न वि
हाय गति नामकर्म ६५ जिसके उदयसें परकी
शक्ति नष्ट हो जावे, परसें गंज्या परान्नव करा
न जाय, सो पराघात नामकर्म ६६ जिसके उद
यसें सासोस्वासके लेनेकी शक्ति उत्पन्न होवे,
सो उस्स्वास नामकर्म ६७ जिसके उदयसें जो-
वांका शरीर उष्ण प्रकाश वाला होवे, सूर्य मंम-
लवत्, सो आतप नामकर्म ६८ जिसके उदयसें

जीवका शरीर अनुष्ण प्रकाशवाला होवे, सो उ द्योत नामकर्म, चंद्र मंम्लवत् ६ए जिसके उद-यसें जीवका शरीर अति न्नारी अति हलका न होवे, सो अगुरु लघु नामकर्म ७० जिसके उद-यसें चतुर्विध संघ तीर्थ थापन करके तीर्थंकर प-दवी लहे, सो तीर्थंकर नामकर्म ७१ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरमें हाथ, पग, पिंमी, साथ ल, पेट, ग्राती, वाहु, गल, कान, नाक, होठ, दांत, मस्तक, केश, रोम शरीरकी नशांकी विचित्र र चना, आंख, मस्तक प्रमुखके पम्दें यथार्थ यथा योग्य अपने २ स्थानमे उत्पन्न करे होवे, संचयसें जैसें वस्तु वनतीहै तैसेंही निर्माण कर्मके उदय-सें सर्व जीवांके शरीरोंमे रचना होतीहै, सो नि-र्माणकर्म ७२ जिसके उदयसें जीव अधिक तथा न्यून अपने शरीरके अवयव करके पीमा पामे, सो उपघात नामकर्म ७३ जिसके उदयसें जीव थावरपणा गेमी हलने चलनेकी लब्धि शक्ति पावे, सो त्रस नाम कर्म है ७४ जिस कर्मके उ-दयसें जीव सूक्ष्म शरीर गेमके वादर चक्षु ग्राह्य

शरीर पावे, सो बादर नामकर्म ७५ जिस कर्मके उदयसै जीव प्रारंभ करी हुइ ठ ६ पर्याप्ति अर्थात् आहार पर्याप्ति १ शरीर पर्याप्ति २ इंद्रिय पर्याप्ति ३ सासोत्स्वास पर्याप्ति ४ भाषा पर्याप्ति ५ मनः पर्याप्ति ६ पूरी करे, सो पर्याप्त नामकर्म ७६ जिसके उदयसें एक जीव एकही उदारिक शरीर पावे, सो प्रत्येक नामकर्म ७७ जिस कर्मके उदयसें जीवके हाम दातादि दृढ बंध होवे, सो थिर नामकर्म ७८ जिस कर्मके उदयसें नाभिसें ऊपरला भाग शरीरका पावे, दूसरेके तिस अंगका स्पर्श होवें तोभी बुरा न माने, सो शुभ नामकर्म ७९ जिस कर्मके उदयसें विना उपकारके कस्यांभी तथा सबंध विना बल्लभ लागे, सो सौभाग्य नामकर्म ८० जिस कर्मके उदयसें जीवका कोकलादि समान मधुर स्वर होवे, सो सुस्वर नामकर्म ८१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन सर्वत्र माननीय होवे, सो आदेय नामकर्म ८२ जिस कर्मके उदयसें जगतमें जीवकी यशकीर्त्ति फैले, सो यश कीर्त्ति नामकर्म ८३ जिस

कर्मके उदयसें जीव त्रसपणा छोडी स्थावर पृथ्वी, पानी, वनस्पत्यादिकका जीव हो जावे, हली चली न सके, सो स्थावर नामकर्म ८४ जिस कर्मके उदयसें सूक्ष्म शरीर जीव पावे, सो सूक्ष्म नामकर्म ८५ जिस कर्मके उदयसें प्रारंभी हुइ पर्याप्ति पूरी न कर सके, सो अपर्याप्त नामकर्म. ८६ जिस कर्मके उदयसें अनंते जीव एक शरीर पामे, सो साधारण नामकर्म ८७ जिस कर्मके उदयसें जीवके शरीरमें लोहु फिरे, हाडादि सिथल होवे, सो अथिर नामकर्म ८८ जिस कर्मके उदयसें नाभीसें नीचेका अंग उपांगादि पावे, सो अशुभ नामकर्म ८९ जिस कर्मके उदयसें जीव अपराधकें विना करेही बुरा लगे, सो दौर्भाग्य नामकर्म ९० जिस कर्मके उदयसें जीवका स्वर मार्जार, ऊंट सरीखा होवे, सो दुःस्वर नामकर्म ९१ जिस कर्मके उदयसें जीवका वचन अच्छाभी होवे, तोभी लोक न माने सो अनादेय नामकर्म ९२ जिस कर्मके उदयसें जीवका अपयश अकीर्त्ति होवे, सो अपयश कीर्त्ति नामकर्म, ९३ इति

नामकर्म. ६.

अथ नामकर्म बंध हेतु लिखते हैं ॥ देव गत्यादि तीस ३० शुभ नामकर्मकी प्रकृतिका बंधक कौन होवे सो लिखते हैं. सरल कपट रहित होवे जैसी मनमें होवे तैसीही कायकी प्रवृत्ति होवे. किसीकोंभी अधिक न्यून तोला, मापा करके न ठगे, परवंचन बुद्धि रहित होवे, ऋद्धिगारव, रसगारव, सातागारव, करके रहित होवे, पाप करता हुआ डरे, परोपकारी सर्व जन प्रिय क्षमादि गुण युक्त ऐसा जीव शुभ नामकर्म बांधे तथा अप्रमत्त यतिपणे चारित्रियो आहारकद्विक बांधे, १ और अरिहंतादि वीश स्थानककों सेवता हुआ तीर्थंकर नामकर्मकी प्रकृति बांधे। और इन पूर्वोक्त कामोसें विपरीत करे अर्थात् बहुत कपटी होवे, कूडा, तोला, मान, मापा करके परकों ठगे, परद्रोही, हिंसा, जूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रहमें तत्पर होवे, चैत्य अर्थात् जिनमंदिरादिककी विराधना करे, व्रतलेकर भग्न करे, तीनो गौरवमें मत्त होवे, हीनाचारी ऐसा जीव नरक गत्यादि अशु-

च नाम कर्मकी ३४ चौतीस प्रकृति बांधे, येह सतसठ ६७ प्रकृतिकी अपेक्षा करके बंध कथन करा, इति नामकर्म ६ संपूर्ण.

अथ गोत्रकर्म तिसके दो भेद. प्रथम उंच गोत्र, विशिष्ट जाती, क्षत्रिय कास्यापादिक उग्रादी कुल उत्तम बल विशिष्ट रूप ऐस्वर्य तपो गुण विद्यागुण सहित होवे, सो उंचगोत्र १ तथा भिक्षाचरादिक कुल जाती आदीक लहे सो नीचगोत्र २ अथ उंचगोत्रके बंध हेतु ज्ञान, दर्शन, चारित्रादीक गुण जिसमें जितना जाने, तिसमें तितना प्रकाशकर गुण बोले, और अवगुण देख के निंदे नही, तिसका नाम गुण प्रेक्षीहै, गुण प्रेक्षी होवे, जातिमद १ कुलमद २ बलमद ३ रूपमद ४ सूत्रमद ५ ऐश्वर्यमद ६ लाभमद ७ तपोमद८ ये आठ मदकी संपदा होवे, तोभी मद न करे, सूत्र सिद्धांत तिसके अर्थके पढने पढानेकी जिसकों रुचि होवे, निराहंकारसें सुबुद्धि पुरुषकों शास्त्र समझावे, इत्यादि परहित करनेवाला जीव उंच गोत्र बांधे, तीर्थंकर सिद्ध प्रवचन संघादिकका अं-

तरंगसें ज्क्तीवाला जीव ञच्चगोत्र बांधे, इन पू-र्वोक्त गुणोसें विपरीत गुणवाला अर्थात् मत्सरी १ जात्यादि आठ मद सहित अहंकारके ञदयसें किसीकों पढावें नही, सिद्ध प्रवचन अरिहंत चैत्यादिककी निंदा करे, ज्क्ति न होवें, सो जीव हीन जाति नीच गोत्र बांधे ॥ इति गोत्रकर्म ७,

अथ आठमा अंतराय कर्मका स्वरूप लिखतेहैं, तिसके पांच ज्रेदहै. जिस कर्मके ञदयसें, जीव शुद्ध वस्तु आहारादिकके हूएज्री दान देनेकी इच्छाज्री करे, परंतु दे नही सकें, सो दानांतराय कर्म १ जिस कर्मके ञदयसें देनेवालेके हूएज्री इष्ट वस्तु याचनेसेंज्री न पावे. व्यापारादिमें चतुरज्री होवे तोज्री नफा न मिले, सो लाज्रांतराय कर्म २ जिस कर्मके ञदयसें एक वार ज्रोगने योग्य फूलमाला मोदकादिकके हूएज्री ज्रोग न कर सके, सो ज्रोगांतराय कर्म ३ जिस कर्मके ञदयसें जो वस्तु बहुत वार ज्रोगनेमें आवे, स्त्री आज्रर्ण वस्त्रादि तिनके हूएज्री वारंवार ज्रोग न कर सके, सो ञपज्रोगांतराय कर्म ४ जिस कर्म

ग्राम कर्मेच्या मतकी क्रिया न कर सके, सो बाल वीर्यांतराय कर्म १ जिसके उदयसें सम्यग्दृष्टि, देश वृत्ति धर्मादि क्रिया न कर सके, सो बाल पंडित वीर्यांतराय कर्म, जिसके उदयसें सम्यग् ज्ञान साधु मोक्ष मार्गकी संपूर्ण क्रिया न कर सके, सो पंडित वीर्यांतराय कर्म. अथ अंतराय कर्मके बंध हेतु लिखतेहै. श्री जिन प्रतिमाकी पुजाका निषेध करे, उत्सूत्रकी प्ररूपणा करे, अन्य जीवां कों कुमार्गमें प्रवर्त्तावे, हिंसादिक आठारह पाप सेवनेमें तत्पर होवे तथा अन्य जीवांकों दान ला भादिकका अंतराय करे, सो जीव अंतराय कर्म बांधे. इति अंतराय कर्म ८.

इस तरें आठ कर्मकी एकसो अमतालीस १४८ कर्म प्रकृतिके उदयसें जीवोंके शरीरादिक की विचित्र रचना होतीहै, जैसें आहारके खाने सें शरीरमें जैसें जैसें रंग और प्रमाण संयुक्त हाम्, नशा, जाल, आंखके पम्दे मस्तकके विचित्र अवयवपणें तिस आहारका रस परिणमता है, यह सर्व कर्मोके उदयसें शरीरकी सामर्थ्यसें होता

है, परंतु यहां ईश्वर नही कुछभी कर्त्ताहै, तैसेंही काल १ स्वभाव २ नियति ३ कर्म ४ उद्यम ५ इन पांचो कारणोंसें जगतकी विचित्र रचना हो रहीहै. जेकर ईश्वर वादी लोक इन पूर्वोक्त पांचो के समवायको नाम ईश्वर कहते होवे, तव तों हमभी ऐसे ईश्वरकों कर्त्ता मानतेहै. इसके सिवाय अन्य कोइ कर्त्ता नहीहै, जेकर कोइ कहे जै नीयोंने स्वकपोल कल्पनासें कर्मोके भेद वना रखेहै. यह कहना महा मिथ्याहै, क्योंकि कार्यानु मानसें जो जैनीयोने कर्मके भेद मानेहै वे सर्व सिद्ध होतेहै, और पूर्वोक्त सर्व कर्मके भेद सर्वज्ञ वीतरागने प्रत्यक्ष केवल ज्ञानसें देखेहै. इन कर्मोके सिवाय जगतकी विचित्र रचना कदापि नही सिद्ध होवेगी, इस वास्ते सुज्ञ लोकोकों अरिहंत प्रणीत मत अंगीकार करना उचितहै, और ईश्वर वीतराग सर्वज्ञ किसी प्रमाणसेंभी जगतका कर्त्ता सिद्ध नही होताहै, जिसका स्वरूप ऊपर लिख आये है.

प्र. १५५–जैन मतके ग्रंथ श्री महावीर-

जीसें लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक कंठाग्र रहे क्योंकर माने जावे, और श्वेतांवर मत मूल का है और दिगंवर मत पीछेसें निकला, इस कथनमें क्या प्रमाण है.

उ.—जैन मतके आचार्य सर्व मतोंके आचार्योंसें अधिक बुद्धिमान थे, और दिगंवराचार्यों सें श्वेतांवर मतके आचार्य अधिक बुद्धिमान् आत्मज्ञानी थे, अर्थात् बहुत कालतक कंठाग्र ज्ञान रखनेमें शक्तिमान थे, क्योंकि दिगंवर मतके तीन पुस्तक धवल ७०००० श्लोक प्रमाण १ जयधवल ६०००० श्लोक प्रमाण २ महाधवल ४०००० श्लोक प्रमाण ३ श्री वीरात् ६८३ वर्षे ज्येष्ठशुदि ५ के दिन भूतवलि १ पुष्पदंतनामें दो साधुयोंनें लिखे थे, और श्वेतांवर मतके पुस्तक गिणतीमें और स्वरूपमें अलग अलग एक कोटि १००००००० पांचसौ आचार्योंनें मिलके और हजारों सामान्य साधुयोंने श्री विरात् ९८० वर्षे वल्लभी नगरीमें लिखे थे, और बौद्धमतके पुस्तकतो श्री वीरात थोमेसें वर्षों पीछेही लिखे गयेथे, जिनोकी बुद्

अल्प थी तिनोंनें अपने मतके पुस्तक जलदीसें लिख लीने, और जिनोकी महा प्रौढ धारणा करनेकी शक्तिवालो बुद्धिथी तिनोंने पीछेसें लिखे. यह अनुमानसें सिद्ध है, और दिगंबर मतमें श्री महावीरके गणधरादि शिष्योंसें लेके ५८५ वर्ष तकके काल लग हुए हजारों आचार्योंमेसें किसी आचार्यका रचा हुआ कोइ पुस्तक वा किसी पुस्तकका स्थल नही है, इस वास्ते दिगंबर मत पीछेसें उत्पन्न हुआ है.

प्र. १५६–देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणनें जो ज्ञान पुस्तकोंमे लिखाहै, सो आचार्योंकी अविछिन्न परंपरायसें चला आया सो लिखा है, परं स्वकपोल कल्पित नही लिखा, इसमें क्या प्रमाण है, जिससें जैनमतका ज्ञान सत्य माना जावे.

उ.–जनरल कनिंगहाम साहिव तथा डाक्तर हॉरनल तथा डाक्तर बूलर प्रमुखोंनें मथुरा नगरीमेंसें पुरानी श्री महावीरस्वामिकी प्रतिमाकी पलांठी ऊपरसें तथा कितनेक पुराने स्तंभों ऊपरसें जो जूने जैनमत संबंधी लेख अपनी स्वछ

बुद्धिके प्रजावसें बांचके प्रगट करे है, और अंग्रेजी पुस्तकोंमें गपके प्रसिद्ध करेहै तिन जूने लेखोंसें निसंदेह सिद्ध होताहै कि, श्री महावीरजीसें लेके श्री देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण तक जैन श्वेतांबर मतके आचार्य कंठाग्र ज्ञान रखनेमें बहुत उद्यमी और आत्मज्ञानी थे, इस वास्ते हम जैन मतवाले पूर्वोक्त यूरोपीयन विद्वानोका बहुत उपकार मानते है, और मुंबइ समाचार पत्रवाला जी तिन लेखोंकों बांचके अपने संवत् १९४४ के वर्षाके चार मासके एक प्रतिदिन प्रगट होते पत्रमें लिखताहै कि, जैनमतका कल्पसूत्र कितनेक लोक कल्पित मानते थे, परंतु इन लेखोंसें जैन मतका कल्पसूत्र सच्चा सिद्ध होता है.

प्र. १५७–व लेख कौनसेंहै, जिनका जिकर आप ऊपले प्रश्नोत्तरमें लिख आए है, और तिन लेखोंसें तुमारा पूर्वोक्त कथन क्योंकर सिद्ध होता है.

उ.–वे लेख जैसें मक्तर बूलर साहिबने मुधारके लिखेहै और जैसे हमकों गुजराती ज

पातरमे ज्ञापांतर कर्त्ताने दीयेहै तैसेंही लिखतेहै, येह पूर्वोक्त लेख सर ए. कनिंगहामके आर्चिद्र- लोजिकल (प्राचीन कालकी रही हुइ वस्तुयों स वंधी) रिपोर्टका पुस्तक ८ आगमेमें चित्र १३– १४ तेरमे चौदवें तक प्रगट करे हुए मथुरांके शिला लेख तिनमें केवल जैन साधुयोंका संप्रदाय आ- चार्योंकी पंक्तियां तथा शाखायों लिखी हुइहै, कें वल इतनाही नही लिखा हुआहै, किंतु कल्पसु- त्रमें जे नवगण (गच्छ) तथा कुल तथा शाखायों कहीहै, सोजी लिखी हुइहै, इन लेखोंमे जो सं- वत् लिखा हुआ है, सो हिंदुस्थान और सीथीया देशके वीचके राजा कनिश्क १ हविश्क २ और वासुदेव ३ इनके समयके संवत् लिखे हुएहै और अव तक इन संवतोकी शरूआत निश्चित नही हुइहै, तोजी यह निश्चय कह सकते है कि येह हिंदुस्थान और सीथीया देशके राजायोंका राज्य इसवीसनके प्रथम सैकेके अंतसें और दूसरे सैकै के पहिले पौणेजागसें कम नही ठरा सक्तेहै, क्यों कि कनिश्क सन इशवीसनके ७८ वा ७९ मे व

र्यमें गद्दी ऊपर वैठा सिद्ध हुआहै, और कितनेक लेखोंमे इन राजायोंका संवत् नही है, सो लेखे इन राजायोंके राज्यसें पहिलेंका है, ऐसें डाक्तर वूलर साहिब कहता है.

प्रथम लेख सुधरा हुआ नीचे लिखा जाता है. सिद्धं। सं २० । ग्रामा १ । दि १०+५ । कोट्टियतो, गणतो, वाणियतो, कुलतो. वएरितो, शाखातो, शिरिकातो, भत्तितो वाचकस्य अर्यसंघ सिंहस्य निर्व्वर्त्त नंदत्तिलस्य....वि.–लस्य कोट्टुंबिकिय, जयवालस्य, देवदासस्य, नागदिनस्य च नागदिनाये, च मातु श्राविकाये दिनाये दानं। इ । वर्द्धमान प्रतिमा. इस पाठका तरजुमा रूप अर्थ नीचे लिखते हैं. "फतेह" संवत् २० का ग्रीष्म कालका मास १ पहिला मिति १५ ज्यवल (जय पाल)की माता वी....लाकी स्त्री दतिलकी (बेटी) अर्थात् (दिन्ना अथवा दत्ता) देवदास और नागदिन्न अथवा नागदत्त) तथा नागदिना (अर्थात् नागदिन्ना अथवा नागदत्ता) की संसारिक स्त्री शिष्यकी वकील कीर्त्तिमान् वर्द्धमानकी प्रतिमा

(यह प्रतिमा) कौटिक गछमेंसें वाणिज नामे कु
लमेंसें वेरी शाखाका सीरीका नागके आर्य संघ
सिंहकी निर्वरतन है, अर्थात् प्रतिष्ठित है. ॥ इति
डाक्तर बूलर ॥

अथ दूसरा लेख. नमो अरहंतानं, नमो सि
द्धानं, सं. ६० + ९ ग्र. ३ दि. ५ एताये पुर्वायेरार
कस्य अर्यककसघ स्तस्य शिष्या आतापेको गह
वरी चस्य निर्वतन चतुवस्यर्न संघस्य या दिन्ना
पडिन्ना (नो. १) ग. (१ ? वैहिका ये दत्ति॥ इ
सका तरजमा ॥ अरहंतने प्रणाम, सिद्धने प्रणा-
म, संवत ६९ यह तारीख हिंडुस्थान और सीथी
आ वीचके राजायोंके संवत्के साथ सबंध नही
रखती है, परंतु तिनोंसें पहिलेंके किसी राजेका
संवत् है, क्योंकि इस लेखकी लिपी वहुत असल
है. ग्रष्म कालका तीसरा मास ३ मिति ५ ऊप-
रकी तारीखमें जिस समुदायमें चार वर्गका स-
मावेश होताहै, तिस समुदायके उपभोग वास्ते
अथवा हरेक वर्गके वास्ते एकेक हिस्सा इस प्र-
माणसें एक। या। देनेमें आया था। या। यह क्या

वस्तु होवेगी सो मैं नही जानता हुं, पति ज्ञोग अथवा पति ज्ञाग इन दोनोंमेंसें कौनसा शब्द/ पसिंद करने योग्य है के नही, यहज्ञी मैं नही कह सक्ताहूं (आ) आतपीको गहवरीरारा (राधा) कारहील आर्य–कर्क तघस्त (आर्य–कर्क तघशी त) का शिष्यका निर्वतन (होइके) वइहीक (अथवा वइहीता) की वक्षीस, यह नाम तोमके इस प्रमाणे अलग कर सके है, आतपीक–औगहव–आर्य [पीछेके ज्ञागमें यह प्रगट है कि निर्वतन याके साथ एकही विज्ञक्तिमें है, तिस वास्ते अन्य दूसरे लेखोमेंज्ञी वहुत करके ऐसीही पद्धतिके लेख लिखे हुए है, निर्वर्तयतिका अर्थ सामान्य रीते सो रजु करता है, अथवा सो पूरा करता है ऐसा है, तिससें वहुत करके ऐसे वतलाता है के दीनी हुइ वस्तु रजु करनेमें आइथी, अर्थात् जिस आचार्यका नाम आगे आवेगा तिसकी इच्छासें अर्पण करनेमें आइथी, अथवा तिससें सो पूरी करनेमें आइथी. गणतो, कुलतों इत्यादि पांचमी विज्ञक्तिके रूप वियोजक अर्थमें लेने चाहिये, स्येइ-

जरका संस्कृतकी वाक्य रचनाका पुस्तक ११६
। १ देखो। इति म्फकर बूलर. अथ तीसरा लेख॥
सिद्धं महाराजस्य कनिश्कस्य राज्ये संवत्सरे
नवमें ॥९॥ मासे प्रथ १ दिवसे ५ अस्यां पूर्वाये
कोटियतो, गणतो, वाणियतो, कुलतो, वइरीतो,
साखातो वाचकस्य नागनंदि सनिर्वरतनं ब्रह्मधू-
तुये ऋट्टिमितस कुटुंविनिये विकटाये श्री वर्द्धमा
नस्य प्रतिमा कारिता सर्व सत्वानं हित सुखाये,
यह लेख श्री महावीरकी प्रतिमा ऊपरहै ॥ इस
का तरजुमा नीचे लिखतेहै ॥ फतेह महाराजा
कनिश्यके राज्यमें ९ नवमें वर्षमेंका १ पहिले
महीनेमें मिति ५ पांचमीमें ब्रह्माकी बेटी और
ऋट्टिमित (ऋट्टिमित्र) की स्त्री विकटा नामकीनें
सर्व जीवांके कल्याण तथा सुखके वास्तें कीर्ति-
मान वर्द्धमानकी प्रतिमा करवाइ है, यह प्रतिमा
कोटिक गण (गच्छ) का वाणिज कुलका और व
इरी शाखाका आचार्य नागनंदिकी निर्वतन है,
(प्रतिष्ठितहै), अब जो हम कल्पसूत्र तर्फ नजर
करीये तो तिस मूल प्रतके पत्रे । ८१–८२ । इस.

वी. इ. वाल्युम (पुस्तक) ११ पत्रे १ए१, हमकों मालम होताहैकि सुठिय वा सुस्थित नामे आ- चार्य श्री महावीरके आठमे पटके अधिकारीनें कौटिक नामे गण (गछ) स्थापन कराथा, तिसके विज्ञाग रूप चार शाखा तथा चार कुल हूए, जि सकी तीसरी शाखा वइरोथी और तीसरा वाणि ज नामे कुलथा, यह प्रगट हैकि गण कुल तथा शाखाके नाम मथुरांके लेखोंमें जो लिखेहै वे क ल्पसूत्रके साथ मिलते आतेहैं. कोटियकुठक को मोयका पुराना रूपहै, परंतु इस वातकी नकल लेनी रसिकहैकि वइरी शाखा सीरीकाज्ञत्ती (स्त्री. काज्ञक्ति) जो नंवर ६ के लेखमें लिखी हूइहै ति सकें ज्ञाग का कल्पसूत्रके जाननेमें नही था, अ- र्थात् जव कल्पसूत्र हूआथा तिस समयमें सो ज्ञाग नही था. यह खाली स्थान ऐसाहैकि जो मुद्दकी दंत कथा (परंपरायसें चला आया कथन) सें लिखीहूइ यादगीरीसें मालुम होताहै. इति मा क्तर. वूलर ॥

अथ चौथा लेख ॥ संवत्सरे ए० व.......

स्य कुटुंबनि. वदानस्य वोधुय....क....गणता
....वहुकतो, कालातो, मझमातो, शाखाता....
सनिकाय त्नतिगालाए थवानि....सिद्ध=स ५ हे
१ दि १० + २ अस्य पूर्वा येकोटो....इस लेखकी
लीनी हुइ नकल मेरे वसमे नहीहै, इस वास्ते
इसका पूर्ण रूप मै स्थापन नही कर सकताहूं,
परंतु पंक्तिके एक टुकरेके देखनेसें ऐसा अनुमान
हो सक्ताहैके यह अर्पण करनेका काम एक स्त्रीसें
हूआथा, ते स्त्री एक पुरुपकी वहु (कुटुंबनी) तरी
के और दूसरेके बेटेकी वहु (वधु) तरीके लिखने
में आइथी ॥ दूसरी पंक्तिका प्रथम सुधारे साथ
लेख नीचे लिखे मूजब होताहै ॥ कोटोयतो गण
तो (प्रश्न) वाहनकतो कुलतो मझमातो साखा-
तो....सनीकायेके समाजमें कोटीय गछके प्रश्न-
वाहनकी मध्यम शाखामेंके कोटोय और प्रश्नवा
हनकये दो नाम होवेंगे, ऐसें मुझको निसंदेह
मालुम होताहै, क्योंकि इस लेखकी खाली जगा
तिस पूर्वोक्त शब्द लिखनेसें वरावर पूरी होंजाती
है, और दूसरा कारणः यहहैकि कल्पसूत्र एस.

वी. ६. पत्र–१७३ मेमें मध्यम शाखा विषयक हकीकतनी पूर्वोक्तही सूचन करतीहै, यह कल्प सूत्र अपनेकों एसे जनाताहैकि सुस्थित और सु- प्रतिबुधका दूसरा शिष्य प्रीयग्रंथ स्थविरें मध्यमा शाखा स्थापन करीथी, हमकों इन लेखोपरसे मा लुम होताहैके प्रोफेसर जेकूबीका करा हुआ गण, कुल तथा शाखायोंकी संज्ञाका खुलासा खराहै, और प्रथम संज्ञा शाखा बतातीहै, दूसरी आचार्यों की पंक्ति और तीजो पंक्तिमेंसें अलग हो गइ, शाखा बतावेहै, तिससें ऐसा सिद्ध होता हैं, कल्प सूत्रमें गण (गछ) तथा कुल जणाया विना जो शाखायोंका नाम लिखताहै, सो शाखा इस ऊ- परख्ये पिछले गणके तावेकी होनी चाहिये, और तिसकी ऊत्पत्ति तिस गछके एक कुलमेंसें हुइ होइ चाहिये, इस वास्ते मध्यम शाखा निसंदेह कौटिक गछमें समाइ हुइथी, और तिसके एक कुलमेंसें फटी हुइ वांकी शाखाथी के जिसके बी चका चौथा कुल प्रश्नवाहनक अर्थात् पणहवाह णय कहलाताहै, इस अनुमानकी सत्यता करें

वाला राजशेखर अपने रचे प्रबंध कोशमें जे
कोश तिनोंमें विक्रम संवत् १४०५ में रचा है,
तिसकी समाप्तिमें अपनी धर्म सबंधी तवाद वि
षयिक लिखी हुइ हकीकतसें साबूत होतीहै, सो
अपनेकों जनाता है कि मै कोटिक गण प्रश्नवा
हन कुल मध्यम शाखा हर्षपुरीय गच्छ और मल
धारी संतान, जो मलधारी नाम अभयदेवसूरि-
कों बिरद मिला था, तिसमेंसे हुं॥ १, २, के पिछ
ले शब्दोंको सुधारे करनेमें मै समर्थ नहीहुं, परं
तु इतना तो कह सक्ताहुंके यह बकीस स्तंभोकी
लिखी हुइ मालुम होती है, ५, कोटिय गण अंत
नंबर २ में लिखा हुआ मालुम होताहै, जहां १,
१, की २ दूसरी तर्फकी यथार्थ नकल नीचे प्र-
माणे वंचातीहै, सि.६=स ५ हे १ दी १०+२ अस्य
पुरवाये कोटो....सर ए. कनिंगहामकी लीनी हुइ
नकलसें मैं पिछले शब्द सुधार सक्ताहूं, सो ऐसें
अस्यापुरवाये कोट (ीय) मालुम होता है, परंतु
टकारके ऊपरका स्वर स्पष्ट मालुम नही होता है,
और यकारके वामे तर्फका स्थान थोडासाही मा

लुम होता है ॥ ६ एक आगेके गणका तथा तिसके एक कुलके नामोंका अपभ्रंसरूप नंबर १० वाला चित्र चौदवेमें १४ मालुम होता है, जहां यथार्थ नकल नीचे लिखे प्रमाणे वांचनेमें आती है ॥ पंक्ति पहिली ॥ स ४०+७ ग्र ३ मो २० एतांसय पुरवायेवरणेगतीपेतीवमीकाकुलवचकस्य रेहेनदीस्यसासस्यसेनस्यनीवतनंमावकद ॥ पंक्ति दूसरी ॥ पशानवधयगोह.. ग. त्न....प्रपा.. ना.. मात.... ॥ मैं निसंदेह कहताहूंके गती मूलसें वांचनेमें आया है, और सो खरेखरा गणे है, जेकर इसतरें होवेतो वरणेञो इस सरीषाही शब्द चारणेके बदले मूलसें वांचनेमें आया होना चाहिये, क्योंकि यह गण जो कल्पसूत्र एस. बी.इ. वाल्युम पत्रे २९१ प्रमाणे आर्य सुहस्तिका पांच मा शिष्य श्री गुप्तसें स्थापन हूआथा, तिसका दूसरा कुल प्रीतिधर्मिक है, (पत्रे. २९२) यह सबबसें मालुम होता हैकि, यह नाम पेतिवमिक कुलके आचार्यका संयुक्त नाम पेतिवमिक कुल शचकस्यमें गुप्त रहा हूआ है. जोके पेतिवमिक

संन्नवित शब्दहै, और संस्कृत प्रइति धर्मिकके दर्शक दाखल प्रीतिधर्मनका साविक शब्द तद्धित गिणतीमें करीएतोन्नी मैं ऐसे मानताहूंके यह यथार्थ नकलको खामी ऊपर तथा ध और व की वीचमें निजीकके मिलते हुए ऊपर विचार करतां, सो वदलाके पैतिधमिक होना चाहिये, वांचणेमें दूसरी न्नूल यह आचार्यके नाममें जहां ह के ऊपर ए—मात है सो असली पिछले व अक्षरके पेटकी है, इस नामका पहिला न्नाग अवस्य रेहे नही था, परंतु रोह था के जो रोह गुप्त, रोहसेन और अन्य शब्दोंमें मालुम पमता है. दूसरी पंक्तिमें थोमासादी सुधारनेका है, जो प्रपा यह अक्षर शुद्द होवें और तिनका शब्द बनता होवे, तवतो अर्पणकरा हुआ पदार्थ एक पाणी पीनेका ठाम होना चाहिये, अब मैं नीचे लिखे मुजव थोमासा वीचमें प्रक्षेप करना सूचन करताहुं ॥ स ४७ ग्र २ दि २० एतस्ये पुरवाये चारणेगणे पेतीधमीक कुलवाचकस्य, रोहनदीस्य, सिसरय, सेनस्य, निवतनं सावक. दर.........

....अपा (दी) ना....इसका तरजुमा नीचे लिखते है ॥

संवत् ४७ त्र्ण्ण कालका महीना १ दूसरा मिति २० ऊपर लिखी मितिमें यह संसारी शिष्य द....का....।........यह एक पाणी पीनेका गाम देनेमें आयाथा, यह रोहनदी (रोहनंदि) का शिष्य और चारण गणके पेतिधमिक (प्रइतिधर्मिक) कुलका आचार्य सेनका निवतन (है) ॥ ८ पिछला लेख जो ऐसीही रीतीसें कल्पसत्रमें जनाया हुआ एक गण कुल तथा शाखाका कुछक अपभ्रंस और करे हुए नामाकों वतलाता है, सो नंवर २० चित्र १५का लेख है, तिसकी असली नकल नीचे लिखे मूजव वंचाती है ॥ पंक्ति पहिली ॥ सिद्ध ॐ नमो अरहतो महावीरस्ये देवनासस्य राज्ञा वासुदेवस्य संवत्सरे । ए.+८ । वर्षे मासे ४ दिवसे १०+१ एतास्या ॥ पंक्ति दूसरी ॥ पूर्ववया अर्यरेहे नियातो गण पुरीध. का कुल व पेत पुत्रीकां ते शाखातो गणस्य अर्य–देवदत्त. वन. ॥ पंक्ति तीसरी ॥ य्यय–क्शेमस्य ॥ पंक्ति ४ ॥ प्रकगीरीणे ॥ पंक्ति

५ मी ॥ किइदिये प्रज. ॥ पंक्ति ६ ठ्ठी ॥ तस्य प्र वरकस्यधीतु वर्णस्य गत्व कस्यम. युय मित्र [१] स........दत्तगा ॥ पंक्ति ७ मी ॥ ये....वतोमइ तीसरी पंक्तिसें लेके सातमी पंक्तिताईतो सुधारा हो सके तैसा है नही, और मैं तिनके सुधारने-की मेहनतभ्नी नही करता हुं, क्योंके मेरे पास मुझकों मदत करे तैसी तिसकी लीनी हुइ नकल नही है, इतनोही टीका करनी बस है के ठ्ठी पंक्तिमें वेटीका शब्द धितु और तिस पीछेका म. युयसो वहुलतासें (माताका) मातुयेके वदले न्नू लसें वांचनेमें आया है, सो लेख यह वतलाता है, के यह अर्पणभ्नी एक स्त्रीने करा था ॥ पंक्ति २। ३ ॥ दूसरी तीसरीमें लिखे हुए नामवाले आचार्योंके नामोकों यह वकील साथका सवंध अंधेरेमें रहता है पिछले वार विंडुयेकी जगे दूसरा नमस्कार नमो न्नगवतो महावीरस्यकी प्रायें रहा हूइ है, प्रथम पंक्तिमें सिद्धश्रो के वदले निश्चित शब्द प्रायें करके सिद्धं है, सर ए. कनिंगहामेआ वांचा हुआ अक्षर मेरी समझ मृजव विराम के

म है, दूसरा महावीरास्येकी जगें महावीरस्य धरना चाहिये, दूसरी पंक्तिमें पूर्व वयाके बदले पूर्ववाये गणाके बदले गणातो, काकुलवके बदले० काकुलतो० टे के बदले पेतपुत्रिकातो, और गणास्यके बदले गणिस्य वांचनेकी जरुरीआत हरेक कोइकों प्रगट मालुम पडेगी, नामोके संबंधमें अर्य-रेहनीय अशक्य रूपहै, परंतु जेकर अपने ऐसे मानोयेके हकी ऊपर इका असल खरेखरा पिछले चिन्हके पेटेका है, तद पीछे सो अर्य-रोहनिय (आर्य रोहनके तावेका) अथवा आर्य रोहनने स्थाप्या हुआ, अर्थात् संस्कृतमें आर्य रोहण होता है, इस नामका आचार्य जैन दंत कथामें अच्छीतरे प्रसिद्ध है, कल्पसूत्र एस. बी. इ. पत्र २९१ में लिखे मूजब सो आर्य सुहस्तिका पहिला शिष्य था, और तिसने उद्देह गण स्थापन करा था. इस गणकी चार शाखा और ६कुल हुएथे, तिसकी चौथी शाखाका नाम पूर्ण पत्रिका मुख्यकरके तिसके विस्तारकी बाबतमें इस लेखके नाम पेतपुत्रिकाके साथ प्रायें मिलता आ

ताहै, और यह पिछला नाम सुधारके तिसकों पोनपत्रिका लिखनेमें मैं शंकाभी नही करताहूं, सोइ नाम संस्कृतमें पौर्ण पत्रिकाकी वरावर होवेगी, और सो व्याकरण प्रमाणे पूर्ण पत्रिका करते हूए अधिक शुद्धनाम है, इन गहों कुलोंमेसें परिहासक नामभी एक कुलहै, जो इस लेखमें कर गए हूए नाम पुरिध-क के साथ कुछक मिलतापणा वतलाताहै, दूसरे मिलते रूपों ऊपर विचार करता हूआ मैं यह संभवित मानताहूंके, यह पिछला रूपपरिहा.क के वदले भूलसें वांचनेमें आयाहै; दूसरी पंक्तिके अंतमे पुरुषका नाम प्रायें छठी विभक्तिमें होवे, और देवदत्त व सुधारके देवदतस्य कर सक्तेहै ॥ ऐसें पूर्वोक्त सुधारेसें प्रथम दो पंक्तियां नीचे मूजव होतीहै ॥ १ सिद्द (म्) नमो अरहतो महावीर (अ) स्य् (अ) देवनासस्या. २, पूर्व्वं, (ओ) य् (ए) अर्य्य–र् (ओ) ह् (अ) नियतागेण (तो) प् (अ) रि (हास) क् (अ) कुल (तो) प् (ओन्) अप् (अ) त्रिकात् (ओ) साखातोगण (२) स्य अर्य्यद–देवदत्त (स्य)

न......इसका तरजुमा नीचे लिखे मुजब होवेगा.

"फतेह" देवतायोंका नाश करता अरहत महावीरकों प्रणाम (यह गुण वाचक नामके ख रेपणेमें मेरेकों बहुत शकहै, परंतु तिसका सुधा रा करनेकों मैं असमर्थहूं) राजा वासुदेवके संव-त्के ९८ मे वर्षमें वर्षाऋतुके चौथे महीनेमें मिति ११ मीमें इस मितिमें...............परिहासक (कुल) में कापोन पत्रिका (पौर्णपत्रिका) शाखा का अरयूय–रोहने (आर्यरोहने) स्थापन करी शाला (गण) मेंका अरयय देवदत (देवदत्त) ए शालाका मुख्य गणि॥ येह लेख एकल्ले देखनेसें यह सिद्ध करतेहैंके मथुराके जैन साधुयोंने संवत् ५ सें ९८ अगनवें तक वा इसवीसन ८३। वा ८४ सें लेके सन इसवी १६६ वा १६७ के बीचमें जैनधर्माधिकारी हुवेवालोंने परस्पर एक संप क राथा, और तिनमेंसें कितनेक गछोंमें मतानुचा रीयोंमें विभाग पमाथा, और सो भाग हरेक शाला (गण) का कितनेक तिसके अंदर भाग हू एथे. ऊपर लिखे हूए नामों वाले पुरुषोंको वाचक

अथवा आचार्यका इलकाव मिलताहे, जो बुद्धिष्ट
ज्ञाणकके साथ मिलताहै और सो इलकाव (पद
वीका नाम) वहुत प्रसिद्ध रीतीसें जैनके जो यति
लोक साधु धर्म संबंधी पुस्तकों श्रावक साधुयों
कों समझने लायक गिणनेमे आतेथे तिनको दे-
नेमें आतेथे, परंतु जो साधु गणि (आचार्य) एक
गच्छका मुखीया कहनेमें आताथा, तिसका यह
भारी इलकाव था, और हालमेंभी पिछली रीती
प्रमाणे वडे साधु मुख्य आचार्यकों देनेमें आता
हे. शाला (गणो) मेंसें कोटिक गणके वहुत फांटे
है, और तिसके पेटे भाग होके दो कुल, दो सा
खायों और एक भक्ति हुआहे, इस वास्ते तिसका
वडा लंवा इतिहास होना चाहिये, और यह क
हना अधिक नही होवेगा, क्योंकि लेखोंके पुरावे
ऊपरसें तिसकी स्थापना अपणे ईसवी सनकी
शूरुआतसें पहिले थोडेसें थोडा काल एक सैंक-
डा (सो वर्ष) में हूइथी, वाचक और गणि सरी
पे इलकावोंकी तथा ईसवी सन पहिले सैकेके अं
तमें असलकी शालाकी हयाती वतलावेहैके तिस

वखतमें जैन पंथकी बहुत मुदत हुआं चलती आत्मज्ञानोकी हयाती हो चुकीथी (कितनेही का लसें कंठाग्र ज्ञानवान् मुनियोकि परंपरायसें संतति चली आतीथी) तिस संततिमें साधु लोक तिस वखतमें अपने पंथकी वृद्धिकी बहुत हुस्यारीसें प्रवृत्ति राखतेथे, और तिस कालसें पहिले भी राखी होनी चाहिये, जेकर तिनोमें वाचक थे तो यहभी संभवितहैके कितनेक पुस्तक वंचाने सीखाने वास्ते बराबर रीतीसें मुकरर करा हूआ संप्रदाय तथा धर्म संबंधी शास्त्रभी था. कल्पसूत्रके साथ मिलनेसें येह लेखों श्वेतांबरमत की दंतकथाका एक बमा भागकों (श्वेतांबरके शास्त्रके बमे भागकों) बनावटके शक (कलंक) सें मुक्त करते है, (श्वेतांबर शास्त्रके बहुत हिस्से बनावटके नही है किंतु असली सच्चे है) और स्थिविरावलिके जिस भाग ऊपर हालमे हम अख्तियार चला सक्ते है, सो भाग निःकेवल जैनके श्वेतांबर शाखाकी वृद्धिका भरोंसा राखने लायक हवाल तिसमें हयाती सावित कर देता है,

और तिस ज्ञागमेंभी ऐसीयां अकस्मात् भूले तथा खामीयों मालुम होती है, के जैसे कोइ के ग्रथको दंत कथाकों हालमें लिखता हुआ वीचमे रही जाए ऐसें हम धार सकेहै, यह परिणाम (आशय) प्रोफेसर जेकोबी और मेरी माफक जे सखस तकरार करता होवे के जैन दंत कथा (जैन श्वेतांवरके लिखे हुए शास्त्रोंकी वात) टीकाके असाधारण कायदे हेठ नही रखनी चाहिये, अर्थात् तिसमेके इतिहास सबंधी कथनो अथवा दूसरे पंथोकी दंतकथामेसें मिली हुइ दूसरी स्वतंत्र खबरोंसें पुष्टी मिलती होवे तो, सो माननी चाहिये; और जो ऐसी पुष्टी न होवे तो जैनमतकी कहनी [स्यादवा] तिसकों लगानी चाहिये, तैसें सखसोंकों उत्तेजन देनेवाला है. कल्पसूत्रकी साथे मथुराके शिला लेखोंका जो मिलतापणा है, सो दूसरी यह वातभी तव-लाता है कि इस मथुरा सहरके जैनलोक श्वेतांवरी थे॥ इति म्हाक्तर बूलर॥ अव हम [इस ग्रंथके कर्त्ता] भी इन लेखोंको वांचके जो कुछ समझे है सोइ

लिख दिखलाते है॥ जैनमतके वाचक १ दिवा-
कर २ क्षमाश्रमण ३ यह तीनो पदके नाम जो
आचार्य इग्यारे अंग, और पूर्वोंके पढे हुएथे ति-
नकों देनेमें आतेथे, जैसें उमास्वातिवाचक १
सिद्धसेन दिवाकर २ देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण ३;
इस वास्ते मथुराके शिला लेखोंमें जो वाचकके
नामसें आचार्य लिखे है, वे सर्व इग्यारे अंग और
पूर्वोंके कंठाग्र ज्ञानवाले थे, और सुस्थित नामे
आचार्यका नाम जो बूलरसाहिबने लिखाहै सो
सुस्थित नामे आचार्य विरात् तीसरे सैकेमे हुआ
है, तिससें कोटिक गणकी स्थापना हुइहै, और
जो वइरी शाखा लिखी है सो विरात् ५८५ वर्षे
स्वर्ग गये, वज्रस्वामीसें स्थापन हुइथी वइरी शा
खाके विना जो कुल और शाखाके आचार्य स्था-
पनेवालें सुस्थित आचार्यके लगभग कालमें हुए
संभव होतेहै, इन लेखोंको देखके हम अपने भाइ
दिगंबरोंसें यह विनती करते है कि जरा मतका
पक्षपात छोडके इन लेखोंकी तर्फ जरा ख्याल
करोके इन लेखोंमें लीखे हुए गण, कुल शाखाके

नाम श्वेतांबरोंके कल्पसूत्रके साथ मिलते है, वा तुमारेभी किसी पुस्तकके साथ मिलते है, मेरी समझमें तो तुमारे किसी पुस्तकमें ऐसे गण, कुल, शाखाके नाम नही है, जे मथुरांके शिला लेखोंके साथ मिलते आवे इससें यह निसंदेह सिद्ध होता है, कि मथुरांके शिला लेखोंमें सर्व गण, कुल शाखा, आचार्योंके नाम श्वेतांबरोंके है, तो फेर तुमारे देवनसेनाचार्यनें जो दर्शन सार ग्रंथमें यह गाथा लिखीहैकि छत्तीस वाससए, विक्कम निवस्स, मरण पत्तस्स, सोरठे वल्लहीए, सेवम संघस मुपन्नो ॥१॥

अर्थ. विक्रमादित्य राजाके मरां एकसौ छत्तीस १३६ वर्ष पीछे सोरठ देशकी वल्लभी नगरीमें श्वेतपट (श्वेतांबर संघ उत्पन्न हुआ) यह कहनां क्योंकर सत्य होवेगा, इस वास्ते इन शिला लेखोंसें तुमारा मत पीछेसें निकला सिद्ध होता है, इस वास्ते श्री विरात् ६०९ वर्ष पीछे दिगंबर मतोत्पत्ति, इस वाक्यसें श्वेतांबरोका कथन सत्य मालुम होता है, और अधुनक मतवाले लुंपक,

ढुंढक, तेरापंथी वगेरे मतोंवालोंसेंभी हम मित्रतासें विनती करते हैके, तुमभी जरा इन लेखोंकों वांचके विचार करोके श्री महावीरजीकी प्रतिमा के ऊपर जो राजा वासुदेवका संवत् ए८ अगानवेका लिखा हुआहै, और एक श्री महावीरजी की प्रतिमाकी पलांठी ऊपर राजा विक्रमसें पहिले हो गए किसी राजेका संवत् विसका लिखा हुआहै, और इन प्रतिमाके वनवनेवाले श्रावक श्राविकांके नाम लिखे हूएहै, और दश पूर्वधारी आचार्योंके समयके आचार्योंके नाम लखे हूएहै॥ जिनोंने इन प्रतिमाको प्रतिष्ठा करीहै; तो फेर तुम लोक शास्त्रांके अर्थ तो जिनप्रतिमाके अधिकारमें स्वकल्पनासें जूठे करके जिन प्रतिमाकी उन्थापना करतेहो, परंतु यह शिला लेख तो तुमारेसें कदापि जूठे नही कहे जाएंगे, क्योंके इन शिला लेखोंकों सर्व यूरोपीयन अंग्रेज सर्व विद्वानोंने सत्य करके मानेहै, इस वास्ते मानुष्य जन्म फेर पाना दुर्लभहै, और थोमे दिनकी जिंदगीहै, इस वास्ते पक्षपात छोमके तुम सच्चा धर्म

तप गछादि गछोंका मानो, और स्वकपोल क-
ल्पित बावीस २२ टोलेका पंथ और तेरापंथीयों
का मत छोड देवो, यह हित शिक्षा मैं आपकों
अपने प्रिय बंधव मानके लिखीहै ॥

प्र. १५८–हमारे सुननेमें ऐसा आयाहैकि
जैनमतमें जो प्रमाण अंगुल (भरत चक्रीका अं-
गुल) सो उत्सेधांगुल (महावीरस्वामिका आधा-
अंगुल) सें चारसौ गुणा अधिकहै, इस वास्ते
उत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन
चारसौ गुणा अधिकहै, ऐसे प्रमाण योजनसें ऋ
षभदेवकी विनीता नगरी लांबी बारां योजन और
चौडी नव योजन प्रमाणथी जब इन योजनाके
उत्सेधांगुलके प्रमाणसें कोस करीये, तब १४४००
चौद हजार चारसौ कोस विनीता चौडी और
१९२०० कोस लंबी सिद्ध होतीहै, जब एक नग
री विनिता इतनी बडी सिद्ध हूइ, तबतो अमेरि
का, अफरीका, रूस, चीन, हिंदुस्थान प्रमुख सर्व
देशोंमें एकही नगरी हूइ, और कितनेक तो चा-
रसौ गुणेसेंभी संतोष नही पातेहै, तो एक हजार

गुणा उत्सेध योजनसें प्रमाण योजन मानते हैं, तब तो विनीता ३६००० हजार कोस चौमी और ४०००० हजार कोस लांबी सिद्ध होती है, इस कालके लोकतो इस कथनको एक मोटी गप्प स मान समझेंगे, इस वास्ते आपसें यह प्रश्न पूछते है कि जैनमतके शास्त्र मुजब आप कितना बमा प्रमाण अंगुलका योजन मानतेहो?

उ. जैनमतके शास्त्र प्रमाणे तो विनीता नगरी और द्वारकांका मापा और सर्व द्वीप, समुद्र, नरक, विमान. पर्वत प्रमुखका मापा जिस प्रमाण योजनसें कहाहै सो प्रमाण योजन उ-त्सेधांगुलके योजनसें दश गुणा और श्री महावीरस्वामीके हाथ प्रमाणसें दो हजार धनुषके एक कोस समान (श्री महावीरस्वामीके मापेसें सवा योजन) पांच कोस जो क्षेत्र होवे सो प्रमाण योजन एक होताहै, ऐसे प्रमाण योजनसें पूर्वोक्त विनीता जंबू द्वीपादिका मापाहै, इस हिसाबसें विनीता द्वारकादि नगरीयां श्री महावीरके प्रमाणके कोसोंसें चौमीयां ४५ पैतालीस कोस और

लंबीयां सातकोस प्रमाण सिद्ध होतीयांहै इतनी बमी नगरीको कोइन्नी बुद्धिमान् गप्प नही कह सकताहै, क्योंकि पीछले कालमें कनोज नगरीमें ३०००० तीस हजार डुकानो तो पान वेचनेवालों की थी, ऐसे इतिहास लिखनेवाले लिखतेहै तो, सो नगर वहुत बमा होनां चाहिये. अन्यन्नी इस कालमें पैकिन नंदन प्रमुख बमे बमे नगर सुने जातेहै, ..ो चौथे तीसरे आरेके नगर इनसें अधिक बमे होवे तो क्या आश्चर्य है, और जो चारसौ गुणा तथा एक हजार गुणा उत्सेधांगुलके योजनसें प्रमाणांगुलका योजन मानते है, वै शास्त्रके मतसें नही है, जो श्री अनुयोगद्वार सूत्रके मूल पाठमें ऐसा पाठ है, उत्सेधांगुलसें सहस्सगुणं प्रमाणं गुलंन्नवति इस पाठका यह अन्निप्राय है कि एक प्रमाणांगुल उत्सेधांगुलसें चारसौ गुणीतो लांबी है, और अढाइ उत्सेधांगुल प्रमाण चौमी है, और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जामी [मोटी] है, इस प्रमाण अंगुलके जब उत्सेधांगुल प्रमाण सूची करोये तब प्रमाणांगुलके तीन

टुकड़े करीये, तब एक टुकड़ा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौड़ा और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाड़ा (मोटा) और चारसौ उत्सेधांगुलका लंबा होता है, ऐसाही दूसरा टुकड़ा होता है, और तीसरा टुकड़ा एक उत्सेधांगुल प्रमाण चौड़ा और इतनाही जाड़ा (मोटा) और दोसो उत्सेधांगुल प्रमाण लंबा होता है, अब इन तीनों टुकड़ोंको क्रमसें जोड़ीये तब एक उत्सेधांगुल प्रमाण चोड़ी और एक उत्सेधांगुल प्रमाण जाडी (मोटी) और एक हजार उत्सेधांगुल प्रमाण लांबी सूची होती है, अनुयोगद्वारमें जो मूल पाठ हजार गुणी कहता है, सो इस पूर्वोक्त सूचीकी अपेक्षासें कहता हैं, परंतु प्रमाणांगुलका स्वरूप नही है, प्रमाणां जैसी ऊपर चारसौ गुणा लिख आएहे तैसीहै, इस चारसौ गुणी प्रमाणांगुलसें ऋषभदेव भरतकी अवगाहनादिका मापाहै, परंतु विनीता, द्वारकां, पृथ्वी, पर्वत, विमान, द्वीप, सागरोंका मापा हजार गुणी वा चारसौ गुणी अंगुलसें नही है इन नगरो द्वीपादिकका मापा तो प्रमाणांगुल

अढाइ उत्सेंधांगुल प्रमाण चौमी है, तिससें मापा करा है, यह जैनमतके सिद्धांतकारोका मत है, परंतु चारसौ तथा एक हजार गुणी उत्सेधांगुल सें विनीता, द्वारकां, द्वीप, सागर, विमान, पर्वतोका मापा करनां यह जैन सिद्धांतका मत नही हे, यह कथन जिनदास गणि क्षमाश्रमणजो श्री अनुयोगद्वारकी चूर्णिमें लिखते है, तथा च चूर्णिका पाठः जेअपमाणंगुलाउपुढवायपमाणाआणिज्जंति तेअपमाणंगुलविरकंन्नेणआणेयव्वानपुण सूइ अंगुलेणंतिएयंचविवत्तगुणएणकेइएअरसलजंपुणमिणंतिअन्नेनसूइअंगुलमाणेणनसुत्तन्नणियंतं॥ इस पाठको नाषा॥ जिस प्रमाणांगुलसें पृथ्वी, पर्वत, द्वीपादिका प्रमाण करीये है सो प्रमाणांगुलका जो विरकंन्न (चौमापणा) अढाइ उत्सेध आंगुल प्रमाणसें करनां, परंतु सूची आंगुलसें पृथ्वी आदिकका प्रमाण न करनां, और कितनेक ऐसें कहते है कि एक प्रमाणांगुलमें एक हजार उत्सेधांगुल मावे, ऐसे प्रमाणांगुलसें मापनां, और अन्य आचार्य ऐसें कहता है कि उत्सेधांगुलसें चारसौ,

गुणी ऐसें प्रमाणांगुलसें पृथ्वी आदिकका मापा करनां, अब चूर्णिकार कहता है कि ये दोनों मत हजार गुणो अंगुल और चारसौ गुणी अंगुलके मापेसें पृथ्वी आदिकके मापनेके मत, सूत्र स- णित नही (सिद्धांत सम्मत नही) है, और अंगुल सत्तरी प्रकरणके कर्त्ता श्री मुनिचंद्र सूरिजी (जो के विक्रम संवत् ११६१ मे विद्यमान थे) इन पू- र्वोक्त दोनो मतोंकों दूषण देतेहैं तथाच तत्पाठः॥ किंचमयेसुदोसुविमगहंगकलिंगमाइ आसव्वेपाये- णारियदेसाएगंमियजोयणेहुंति ॥ १६ ॥ गाथा ॥ इसकी व्याख्या ॥ जेकर ऐसें मानीयेके एक प्र- माण अंगुलमें एक सहस्र उत्सेधांगुल अथवा चा रसौ उत्सेधांगुल मावे, ऐसे योजनोंसें पृथ्वी आ दिक मापीए, तबतो प्रायें मगधदेश, अंगदेश, कलिंगदेशादि सर्व आर्य देश एकही योजनमें मा जावेंगे, इस वास्ते दशगुणे उत्सेधांगुलके विस्कं- भपणेसें मापना सत्य है, इस चर्चासें अधिक पांचसौ धनुषकी अवगाहना वाले लोक इस छो टेसें प्रमाणवाली नगरीमें क्योंकर मावेंगे, और

द्वारकांके करोमों घर कैसें मावेंगे, और चक्रवर्त्ती के ब्रानवे ए६ करोम गाम इस ब्रोटेसे न्नरतखंममें क्योंकर वसेंगे, इनके उत्तर अंगुलसत्तरीमें बहूत अच्छीतरेंसें दीनें है, सो अंगुलसत्तरी वांचके देखनां. चिंता पूर्वोक्त नही करनी, यह मेरा इस प्रश्नोत्तरका लेख बुद्धिमानोंकों तो संतोषकारक होवेगा, और असत् रूढीके माननेवालोंकों अचंन्ना जनक होवेगा, इसी तरे अन्यन्नी जैनमतकी कितनीक वाते असतरूढीसें शास्त्रसें जो विरूद्ध है, सो मान रक्खी है, तिनका स्वरूप इहां नही लिखते है.

प्र. १एए–गुरु कितने प्रकारके किस किस की उपमा समान और रूप १ उपदेश २ क्रिया ३ कैसी और कैसेके पासों धर्मोपदेश नही सुननां. और किस पासों सुननां चाहिये.

उ.–इस प्रश्नका उत्तर संपूर्ण नीचे मुजब समझ लेनां.

एक गुरु चास (नीलचास) पक्षी समान है. १

जैसें चाप पक्षीमें रूप है, पांच वर्ण सुंदर होनेसें ओर शकुनमेंभी देखने लायक है १ परंतु उपदेश (वचन) सुंदर नही है, २ कीमे आदिके खानेसें क्रिया (चाल) अछी नही है ३ तैसेही कितनेक गुरु नामधारीयोमें रूप (वेप) तो सुविहित साधुका है १ परं अशुद्ध (उत्सूत्र) प्ररूपनेसें उपदेश शुद्ध नही, २ और क्रिया मूलोत्तर गुण रूप नही है, प्रमादसे निरवद्याहारादि नही गवेपणा करते है ३ यडक्तं ॥ दगपाणंपुप्फफलंअणेसणिज्जं गिहत्थकिच्चाइंअजयापडिसेवंतिजइवेसविडंबगानरं ॥ १ ॥ इत्यादि ॥ अस्यार्थः ॥ सचित्त पाणी, फूल, फल, अनेषणीय आहार गृहस्थके कर्त्तव्य जिवहिंसा १ असत्य २ चोरी ३ मैथुन ४ परिग्रह ५ रात्रिभोजन स्नानादि असंयमी प्रति सेवतेहै, वेभी गृहस्थ तुल्यही है, परंतु यतिके वेपकी विटंवना करनेसें इस वातसें अधिक है, ऐसे तो संप्रति कालमे दुःखम आरेके प्रभावसें बहूत है, परंतु तिनके

नाम नही लिखते है, अतीत कालमेंतो ऐसे कु-लवालकादिकोंके दृष्टांत जान लेने, कुलवालकमें सुविहित यतिका वेषतो था. १ परं मागधिका गणिकाके साथ मैथुन करनेमें आशक्त था, इसवास्ते अच्छी क्रिया नहोथी २ और विशाला भंगादि महा आरंभादिका प्रवर्त्तक होनेसे उपदेशभी शुद्ध नही था, सामान्य साधु होनेसे वा उपदेशका तिसकों अधिकार नही था, ३ ऐसेही महाव्रतादि रहित १ उत्सूत्र प्ररूपक (गुरु कुलवास त्यागी) सो कदापि शुद्ध मार्ग नही प्ररूप शक्ताहे २ निकेवल यति वेषधारक है ३ इति प्रथमो गुरु भेद स्वरूप कथनं ॥१॥

दूसरा गुरु क्रौंच पक्षी समान है. २

क्रौंचपक्षीमें सुंदर रूप नही है, देखने योग्य वर्णादिके अभावसें १ क्रियाभी अच्छी नही, कीडे आदिकोंके भक्षण करनेसें २ केवल उपदेश (मधुर ध्वनि रूप) है ३ ऐसेही कितनेक गुरुयोंमें रूप नही. चारित्रिये साधु समान वेषके अभाव सें १ सत क्रियाभी नही, महाव्रत रहित और

प्रमादके सेवनेसें १ परंतु उपदेश शुद्ध मार्ग प्ररू पण रूप है ३ प्रमादमें पमे और परिव्राजकके वेषधारी उत्पन्न तीर्थंकरके पोते मरीच्यादिवत् अथवा पासत्थे आदिवत् क्योंकि पासत्थेमें साधु समान क्रिया तो नही है १ और प्रायें सुविहित साधु समान वेषभी नही, यडुक्तं ॥ ववंडुपम्मिले हियमपाणसकन्निअंडुकूलाई इत्यादि॥ अर्थः—वस्त्र डुप्रति लेखित प्रमाण रहित सदशक पछेवमी र खनेसें सुविहितका वेष नही २ परं शुद्ध प्ररूपक है, एक यथाछंदेकों वर्जके पासत्था १ अवसन्ना २ कुशील ३ संसक्त ४ ये चारों शुद्ध प्ररूपक होस केहै, परंतु दिन प्रतिदश जणोका प्रतिबोधक नं-दिषेणसरीषे इस न्नांगेमें न जानने, क्योंके नं-दिषेणके श्रावकका लिंग था ॥ इति डुसरा गुरु स्वरूप न्नेद ॥२॥

तीसरा गुरु न्नमरे समान है. ३

न्नमरमें सुंदर रुप नही, कृश्न वर्ण होनेसें १ उपदेश (तिसका उदात्त मधुर स्वर) नही है २ केवल क्रियाहै उत्तम फूलोंमेंसें फूलोंको विना डुख ... तिनका परिमल पीनेसें ३ तैसेही कितनेक

गुरु यतिके वेषवालेभी नहीहै १ और उपदेशक भी नही है २ परंतु क्रिया है, जैसें प्रत्येक बुद्धा दिकोंमे प्रत्येकबुद्ध, स्वयंबुद्ध तीर्थंकरादि यद्यपि साधुतो है, परंतु तीर्थगत साधुयोंके साथ प्रवच न १ लिंगसे २ साधर्मिक नही है, इस वास्ते यति वेष भी नही,१ उपदेशक भी नही २ "देशनाऽना सेवकः प्रत्येकबुद्धादि रित्यागमात्" क्रियातो है, क्योंकि तिस भवसेंही मोक्ष फल होताहै ॥ इति तृतियो गुरु स्वरूप भेद ॥३॥

चौथा गुरु मोर समान है. ४

जैसें मोरमें रूपतो है पंच वर्ण मनोहर १ और शब्द मधुर केकारूप है २ परं क्रिया नही है, सर्पादिकोंकोंभी भक्षण कर जाता है, निर्दय होनेसें ३ तैसें गुरुयों कितनेकमें वेष १ उपदेश- तो है २ परंतु सत्क्रिया नही है, ३ मंग्वाचार्य- वत् ॥ इति चोथा गुरु स्वरूप भेद ॥४॥

पांचमा गुरु कोकीला समान है. ५

कोकिलामें सुंदर उपदेश (शब्द) तो है, पं चम स्वर गानेसें १ और क्रिया आंबकी मांजरा-

दि शुचि आहारके खाने रूपहै. तथा चाहुः ॥ आ
हारे शुचिता, स्वरे मधुरता, नोडे निरारंभता ।
बंधौ निर्ममता, वने रसिकता, वाचालता माधवे॥
त्यक्त्वा तद्द्विज कोकीलं, मुनिवरं दूरात्पुनर्दांभिकं।
वंदेते वत खंजनं, कमि भुजं चित्रा गतिः कर्म
णां ॥१॥ परंतु रूप नही काकादिसैंभी हीनरूप
होनेसें ३ तैसेंही कितनेक गुरुयोंमें सम्यक् क्रिया
१ उपदेश २ तोहै, परंतु रूप (साधुका वेष) किसी
हेतुसें नहो है, सरस्वतीके छुडाने वास्ते यति वेष
त्यागि कालिकाचार्य वत् ॥ इति पांचमा गुरु
स्वरूप भेद ॥ ५ ॥

छठा गुरु हंस समान है. ६

हंसमे रूप प्रसिद्ध है १ क्रिया कमल नाला
दि आहार करनेसें अच्छोहै २ परंतु हंसमे उपदेश
(मधुर स्वर) पिक शुकादिवत् नही है ३ तैसें ही
कितने एक गुरुयोंमें साधुका वेष १ सम्यक् क्रि
यातो है २ परंतु उपदेश नही, गुरुने उपदेश क-
रनेकी आज्ञा नही दोनी है, अनधिकारी होनेसें
धन्यशालिभद्रादि महा ऋषियोंवत् ॥ इति छठा

गुरु स्वरूप भेदं ॥६॥

सातमा गुरु पोपट तोते समान है. ७

तोता इहां बहुविध शास्त्र सूक्त कथादि परिज्ञान प्रागल्भ्यवान् ग्रहण करनां. तोता रूप करके रमणीय है १ क्रिया आंब कदली दाडिम फलादि शुचि आहार करता है. इस वास्ते अच्छी है. २ उपदेश वचन मधुरादि तोतेका प्रसिद्ध है ३ तैसे कितनेक गुरु वेष १ उपदेश २ सम्यक क्रिया. ३ तीनों करके संयुक्त है, श्रीजंवु श्रीवज्रस्वाम्यादिवत् इति सातमा गुरु स्वरूप भेद ॥७॥

आठमा गुरु काक समान है. ८

जैसे काकमें रूप सुंदर नही है १, उपदेशभी नही, कडुया शब्द बोलनेसें २ क्रियाभी अच्छी नही है, रोगी, वूढे वलदादिकोंके आंख कढ लेनी, चूंच रगमनी और जानवरोंका रुधिर मांस, मलादि अशुचि आहारि होनेसें ३ ऐसेंही कितनेक गुरुयोंमे रूप १ उपदेश २ क्रिया ३ तीनोंही नही है, अशुद्ध प्ररूपक संयम रहित पासत्थे आदि जानने, सर्व परतीर्थीकभी इसी भंगमे जा

इति आठमा गुरु स्वरूप नेद ॥ ७ ॥

इनमेसें नपदेश सुनने योग्यायोग्य कौन है.

इन आठोही नांगोमें जो नंग क्रिया रहित (संयमरहित) है वे सर्व त्यागने योग्य है, और जो नंग सम्यक् क्रिया सहित है वे आदरने योग्य है, परंतु तिनमें नो जो नपदेश विकल नंगहै वे स्वतारकनी है, तोनी परकों नही तारसक्ते है, और जे नंग अशुद्धोपदेशक है. वेतो अपनेकों और श्रोताकों संसार समुइमें रुबोनेही वाले है, इस वास्ते सर्वथा त्यागने योग्य है, और शुद्धोपदेशक, क्रियावान् पक्ष कोकिलाके दृष्टांत सूचित अंगीकार करने योग्य है, त्रीक योगवाला पक्ष तोतेके दृष्टांत सूचित सर्वसें नत्तमहै । और शुद्ध प्ररूपक पासज्ञादि चारोंके पास नपदेश सुनना नी शुद्ध गुरुके अन्नावसें अपवादमें सम्मत है.

प्र. १६०–इस जगतमें धर्म कितने प्रकारके और कैसी नपमासें जानने चाहिये.

न. इस प्रश्नोत्तरका स्वरूप नीचेके लिखे

है, इस वास्ते इसका नामभी धर्मही लिखाहै ॥ इति प्रथम धर्म भेद॥१॥

एकधर्मशमी खेजरो बंबूल कीकर खदिर वेरी करीरादि करके मिश्रित वन समानहै यह वन विशिष्ट शुभ फल नही देता है किंतु सांगरी वब्बूल फलादि सामान्य नीरस फल देतेहै, सांगरोपकी शुष्क हुइ होइ किं-

इस वन समान बौद्धोंका धर्म है, क्योंकि ब्रह्मचर्यादि कितनीक सत् क्रिया और ध्यान योगाभ्यासादिकके करनेसें मरां पीछें व्यंतर देवताकी गतिमे उत्पन्न होनेसें कुछक शुभ सुख रूप फल भोगमें देताहै, तथा चोक्तं बौद्ध शास्त्रे ॥ मृद्वीशय्या प्रातरुत्थाय पेया॥ भक्तं मध्ये पानकंचा परान्हे ॥ द्राक्षा पाणं शर्कराच ऽर्धरात्रौ ॥ मोक्षश्चांत शाक्य पुत्रेण दृष्टः ॥१॥ मणुन्न भोयणं, भुच्चा मणुन्नं, सयणासणं मणुन्नं, सिअगारंसि मणुन्नं, झायए मुणी ॥२॥ इत्यादि ॥ बौद्ध मतके शास्त्रानुसारे अपने शरीरकों पुष्ट करनां, मनके अनुकूल आहार, शय्यादिकके भोगसें और बौद्धभिक्षुके पात्रमें कोइ मांस दे देवे तो तिसकोभी खा लेनां,

चित् प्रथम खाते हूए मोठी लगती है परंतु कंटकाकोर्स होनेसें विदारणादि अनर्थका हेतु होवेहै ॥२॥

स्नानादिकके करनेसें पांचो इंद्रियोंके पोषनरूप और तप न करनेसें आदिमें तो मीठा (अछा) लगता है, परंतु भवांतरमें दुर्गति आदिक अनर्थ फल उत्पन्न करताहे, इस वास्ते यह धर्मभी त्यागने योग्य है ॥ इति दूसरा धर्म भेद ॥२॥

एक धर्म पर्वतके वनतथा जंगली वन समानहै,इस वनमें थोहर, कंथेरो, कुमार प्रमुखके फल देनेवाले वृक्षहै और कंटकादिसें विदारण करणे

इस वन समान तापस १ नैयायिक, वैशेषिक, जैमनीय, सांख्य, वैश्रवआदि आश्रित सर्व लौकिक धर्म और चरक परिव्राजक इनके विचित्रपणेसें विचित्र प्रकारका फलहै सोइ दिखातेहै, कितनेक वेदोक्त महा यज्ञ, पशुवध रूप स्नान होमादि करके धर्म मानतेहै, वे कंथेरो वनवत् है. परभवमें अनर्थरूप जिनका प्राये फल होवेगा. और कितनेक तो तुरमणीशदत्तराजाकी तरें निकेवल नर

सें अनर्थके-फल वाले होते है । तथाचोक्तं आर-
न्नी जनकहैएयके ॥ येवैःहयथा २ यज्ञेपुपशुन्विश
१.और कित-संतितेतथा २ इत्यादि ॥ तथाशुकसं-
नेक धव स-वादे॥ यूपं ठित्त्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा
ल्लकोके सुप-रुधिर कर्दमं, यद्येवं गम्यते स्वर्गे, नर-
लाश पनसके केन गम्यतेः ॥ १ ॥ स्कंधपुराणे ॥
सीसमादि वृवृक्षां श्छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रु
कहै,इनके फधिर कर्दमं, दग्ध्वा वन्हौ तिलाज्यादि,
लतो निःसाचित्रं स्वर्गोभिलष्यते ॥१॥ कितनेक
रहै, परंतु विअपात्रकों अशुद्द दान गायत्र्यादिके
शिष्ट अनर्थजापादि धव पलाशादिवत् प्राय फल
जनक नहीहैदेनेवालेन्नो सामग्री विशेष मिले किं
२ और कितचित् फलजनक है, परं अनर्थ जनक
नेक वेरी खे-नही, विवक्षितहै, इस स्थलमें प्रतिदिन
जन्नी खयरा-लक्ष दान देनेवाला मरके हाथी हूए
दि निःसारलेठवत्, तथा दानशालादि करानेवाले
अशुभफलदेतेनंदमणिकारवत् और सेचनक हाथीके
हैकंटकोंसेंविजीव लक्ष न्नोजी ब्राह्मणवत् दृष्टांत
--णादि अजानने ॥२॥ कितनेक तो सावद्य (स

निष्टके जन-कन्नोहोतेहैं३ और कितने-क किंपाकादि वृक्ष हैं, मुख मीठे परिणाममें विरस फलके देनेवालेहैं४कितनेक नडुंबर (गूलर) बिल्वादि फल निःसारशुन्न फलवाले कंटकादिके अन्नावसें अनर्थ जनकनही हैं५ कितनेक नारिंग, जंबी

पाप) अनुष्ठान, तप, नियम दानादि अन्यायसें ड्रव्योपार्जन करी कुपात्रदानादि वेरो खेजरीवत् किंचित् राज्यादि असार शुन्न फल डुर्लन्न बोधिपणा हीन जातित्व परिणाम विरसादि अनर्थन्नी देवेहै, कौणिक पिउले नवमें तपस्वीवत् और जैनमति नाम मिथ्यादृष्टी सुसढादि देव गतिमें गए बहुल संसारी हूए, वे न्नी मिथ्या तप करनेमें तत्पर हूए होए,इसी न्नंगमें जानने ॥३॥ कितनेक किंपाकादिको तरें असत् आग्रह देव गुरुके प्रत्यनीकादि न्नाव वाले तथाविध तपोनुष्टानादि करके एकवार स्वर्गादि फल देके बहुल संसार तिर्यंच नरकादिके डुख देनेवाले होतेहै, गोशालक, जमालि आदिवत् ॥४॥ तथा कितनेक नड्न्नाव विशेष पात्र गुणादि परिज्ञान रहित दान पूजादि मिथ्यात्वके रागसें करतेहै, वे नडुंबरादिवत् किंचित् राज्य

र, करसादि
मध्यम फला
के वृक्षहै, परं
तु अनर्थ ज-
नक नहीहै ६
कितनेक रा-
यण (खिर-
णी) आंव,
प्रियंगु प्रमु-
ख सरस शु-
न्न पुष्प फल
वाले है, ये
सर्व मालकी
रहित जानने
७ ऐसें तार-
तम्यतासें उ-
त्तम, मध्यम,
जघन्य वृक्षों-
की विचित्र-

मनुष्यके न्नोग समःयादि असार शुन्न
फलही देतेहै, दूसरेके नपरोधसें दान
देनेवाले सुंदर वाणीयेकीतरें जैनधर्मा
श्रित न्नी निदान सहीत अविधिसें
तप अनुष्टान दानादि करनेवालेन्नी
इसी न्नंगमें जान लेने, चंड्र, सूर्य वहु
पुत्रिकादिके दृष्टांत जान लेने ॥ ५ ॥
कितनेक तापसादिधर्मी बहुत पाप र
हित तपोनुष्ठान कंदमूल फलादि स-
चित्त न्नोजन करनेवाले अल्प तपवाले
नारंग, जंवीर, करणादि तरुवत् ज्यो
तिषि न्नवनपत्यादि वि मध्यम देवर्द्धि
फलदायीहै. श्री वीर पिछले न्नवोंमें
परिव्राजक पूर्ण तापसवत् तथा जैन
मति सरोस गोरव प्रमाद संयमीआ
दि मंडुकी वध करनेवाले क्षपक मुनि
मंगु आचार्यादिवत् ॥ ६ ॥ कितनेक
तामलि ऋषिकी तरें उग्र तप करने-
वाले चरक परिव्राजकादि धर्मवाले

तासें पर्वतके वनोंकी श्री विचित्रताजा ननी ॥३॥

आंबादि वृक्षोंवत् ब्रह्मदेवलोकावधि सुख फल देतेहै ॥७॥ ये सर्व पर्वतके वन समान कथन करे, परंतु सम्यग् दृष्टीकों ये सर्व त्यागने योग्यहै ॥ इति तीसरा धर्म भेद ॥३॥

एक धर्म नृपवन समान श्रावक धर्महै राजके वनमें अंब, जंबू राजादनादि जघन्य वृक्ष है केला, नालोकेर सोपारी आदिमध्यम माधवी लता तमाल एला, लवग चंदना गुरुतगरादय

इस वन समान श्राद्ध (श्रावक) धर्म सम्यक्त्वे पूर्वक बारांव्रताकी अपेक्षा तेरासौकरोड अधिक भेद होनेसें विचित्र प्रकारका सम्यग् गुरु समीपे अंगीकार करनेसें परिगृहीतहै, अज्ञान मए लोकिक धर्मसें अधिकहै, और अतिचार विषय कषायादि चौर श्वापदादिकोंसें सुरक्षितहै, और गुरु उपदेश आगमाभ्यासादि करके सदा सुसिंच्य मानहै, सो धर्म देवलोकके सुख जघन्य फल है, सुलभबोधि होनेसे और निश्चित जलदी सिद्धि सुखांके देनेवाले होनेसें और [illegible] खोके सुखांसें बहुत सुभग

उत्तम चंपक
राज चंपक
जाति पाढ-
लादि फूल त
रु विचित्र है,
ये सर्व गिरि
वनके वृक्षोंसें
सींचे, पाले
हुए होनेसें अ
धिक फल, प
त्र पुष्पवाले
है, सदा सर-
स बहु मोले
फलादि देते
है ॥४॥

दि श्रावकोंकी तरें देतेहै, और उत्क-
र्षसें तो जीर्ण सेठादिकी तरें बारमे
अच्युत देवलोकके सुख देतेहै ॥ इस
वास्ते बारांव्रत रूप श्राद्द (श्रावक)
धर्म यत्नसें अंगीकार गृहस्थ लोकोने
करनां, और अधिक अधिक शुद्धता-
वोंसें पालनां आराधनां चाहिये ॥
इति चौथा धर्म भेद ॥ ४ ॥

एक धर्म दे
वताके वनस
मान साधु ध
र्म है, देवता-
के वनमें देव

इस वन समान चारित्र धर्मकी पु-
लाक वकुश कुशील निर्ग्रंथ स्नातका
दि विचित्र भेदमय है, विराधक श्रा-
वक साधुयोंका धर्म तोसरे मिथ्यात्व
धर्ममें ग्रह करनेसें इस धर्ममें अवि-

तायोंकी तारतम्यतासें शृंदि मानोके क्रीमाकरनेके नंदन वनादि मेंजी राजाके वनवत् जघन्य,मध्यम,उत्तमवृक्ष होतेहै,सर्व ऋतुके फलवान् वृक्षोंके होनेसें और देवताके प्रभावसें सर्व रोग विपादि दूर करे. मनचिंतित रूप करण जरा प-

राधक यति धर्मवाले जानने, तिनकों जघन्य सौधर्म देवलोकके सुखरूप फलहै. आराधिक श्रावक धर्मवालेसें अधिक और बारा कल्प देवलोक, नव ग्रैवेयकादि मध्यम सुख और उत्कृष्टतो अनुत्तर विमानके सुख संसारिक और संसारातीत मोक्ष फल देतेहै, इस वास्ते ते यह धर्म सर्व शक्तिसें उत्तरोत्तर अधिक अधिक आराधना चाहिये, यह सर्व धर्मोंसें उत्तम धर्महै, यह कथन उपदेश रत्नाकरसें किंचित् लिखाहै ॥

लित नाशक इत्यादि बहु प्रभाववाली ज्ञषधीयां पत्र फलादिकरके संयुक्तहै, पि- बले सर्व व- नोसें यह प्र- धान वन है॥ इति पाचमा धर्म भेद ॥५॥

प्र. १६१–जो जैनमतमें राजे जैनधर्मी होते होवेंगे, वे जैनधर्म क्योंकर पाल सक्ते होवें- गे, क्योंकि जैनधर्म राज्यधर्मका विरोधी हमकों मालुम होताहै.

ज–गृहस्थावस्थाका जैनधर्म राज्यधर्म (रा ज्यनीति) का विरोधी नही है. क्योंकि राज्यधर्म चौर यार खूनी असत्यभाषी प्रमुखाकों कायदे मू जब दंड देनाहै. इस राज्यनीतिका जैनराजाके प्रथम स्थूल जीवहिंसा रूप व्रतका विरोध नही है, क्योंकि प्रथम व्रतमें निरपराधिकों नही मा-

रना ऐसा त्याग है, और चौर यार खूनी असत्य भाषी आदिक अन्याय करनेवालेतो राजाके अपराधी है, इस वास्ते तिनके यथार्थ दंड देनेसें जैन धर्मी राजाका प्रथम व्रत भंग नही होताहै, इसी तरे अपने अपराधि राजाके साथ लमाइ करनेसें भी व्रत भंग नही होताहै. चेटक महाराज संप्रति कुमारपालादिवत्, और जैनधर्मी राजे बारांव्रतरूप गृहस्थका धर्म बहुत अच्छी तरेसें पालते थे, जैसें राजा कुमारपालने पाले.

प्र. १६१–कुमारपाल राजाने बारांव्रत किस तरेंके करे, और पाले थे.

उ.–श्री कुमारपाल राजाके श्री सम्यक्त मूल बारांव्रत पालनके थे ॥ त्रिकाल जिन पूजा. १ अष्टमी चतुर्दशीमें पोषधोपवासके पारणेमें जो देखनेमें कोइ पुरुष आया तिसकों यथार्थ वृत्ति दान देकर संतोष करनां २ और जो कुमारपालके साथ पोषध करते थे तिनको अपने आवासमें पारणा करानां ३ टूटे हुए साधर्मिकका उद्धार करनां, एक हजार दीनार देना ४ एक वर्षमें साध

र्मियोकों एक करोम दीनार देने, ऐसें चोदह वर्ष में चौदह करोम दोनार दीने ५ अगानवे लाख ए८ रूपक उचित दानमें दीने, बहत्तर ७२ लक्ष रूपक द्रव्यके पत्र निसंतान रोनेवालीके फामे ७ इक्कीस २१ कोश (ज्ञानभंडार) लिखवाए ८ नित्य प्रतें श्री त्रिभुवनपाल विहार (जो कुमारपालने ग्यान वे ए६ करोम रूपकके खरचसें जिन मंदिर बनवाया था) तिसमें स्नात्रोत्सव करनां ए श्री हेमचंद्रसूरिके चरणोंमे द्वादशावर्त्त वंदन करनां १० पीछे क्रमसें सर्व साधुयोंको वंदन करनां ११ जिस श्रावकने पहिलां पोषधादि व्रत करे होवे तिसको वंदन, मान, दानादि करनां १२ अगारह देशोंमे अमारीपटह कराया १३ न्याय घंटा वजानां १४ और अगारह देशोंके सिवाय अन्य चौदह देशोंमें धनवलसें मैत्रीवलसें जीव रक्षाका करानां१५ चौदहसौ चौतालीस १४४४ नवीन जिन मंदिर बनवाए १६ सोलेसौ १६०० जीर्ण जिन मंदिरोंका उद्धार कराया १७ सातवार तीर्थ यात्रा करी १८ ऐसे सम्यक्तकी आराधना करी ॥ पहिले ब-

तमे सपराधी विना मारो ऐसे शब्दके कहनेसे एक उपवास करनां १ दूसरे व्रतमे नूलसे जूठ बोला जावे तो आचाम्लादि तप करनां २ तीसरे व्रतमें निसंतान मरेका धन नही लेनां ३ चौथे व्रतमें जैनी हुआ पीछे विवाह करणेका त्याग और चोमासेके चार मास त्रिधा शील पालनां, मनसें नंगे एक उपवास करनां, वचनसें नंगे एकाचाम्ल, कायसें नंगे एकाशन. एक परनारी सहोदर विरुद धरनां. नोपलदेवी आदि आठ राणीयोंके मरे पीछे प्रधानादिकोंके आग्रहसेंनी विवाह करनां नही, ऐसा नियम नंग नही करा. आरात्रिकार्थ सोनेमयि नोपलदेवीकी मूर्त्ति करवाइ, श्री हेमचंद्रसूरिजीए वासक्षेप पूर्वक राजर्षि विरुद दीना ४ पांचमे वृतमें ७ करोमका सोना, आठ करोमका रूपा, हजार तुला प्रमाण महर्घ्य मणिरत्न, बत्तीस हजारमण घृत, बत्तीस हजारमण तेल, लक्षा शालि चने, जुवार, मूंग प्रमुख धान्योंके मूंढक रक्के पांच लाख ५००००० अश्व, पांच हजार ५०००, हाथी, पांचसौ ५०० ऊंट,

हाट, सन्नायान पात्र गाम्हे वाहिनीये सर्व अलग अलग पांचसौ पांचसौ रक्खे. इग्यारेसो हाथी११००, पंचास हजार ५०००० संग्रामी रथ, इग्यारे लाख ११००००० घोम्हे, अग्गरह लाख १८००००० सुन्नट. ऐसें सर्व सैनका मेल रक्खा. ५ छठे व्रतमें वर्षाकालमें पट्टनके परिसरसें अधिक नही जाना ६ सातमें न्नोगोपन्नोग व्रतमें मद्य, मांस, मधु, म्रक्षण, वहुवीज पंचोडुं वरफल, अन्नक्ष, अनंतकाय, घृत पूरादि नियम देवताके विना दीना वस्त्र, फल आहारादि नही लेनां. सचित्त वस्तुमें एक पानकी जाति तिसके वीम्हे आठ, रात्रिमें चारों आहारका त्याग. वर्षाकालमें एक घृत विकृती लेनी, हरित शाक सर्वका त्याग. सदा एकाशनक करनां, पर्वके दिन अब्रह्मचर्य सर्व सचित विगयका त्याग ७ आठमें व्रतमें सातों कुव्यसन अपने देशसें काढ देने, ८ नवमें व्रतमें उन्नय काल सामायिक करनां, तिसके करे हुए श्री हेमचंद्रसूरिके विना अन्य जनमें वोलनां नही. दिनप्रते १२ प्रकाश योग शास्त्रके २० वीस वीतराग स्तोत्रके प

ढने ए. दशमें वृतमें चतुर्मासेमें शत्रू ऊपर चढाइ नही करनी १० पोषधोपवासमें रात्रिमें कायोत्स र्ग करनां, पोषधके पारणे सर्व पोषध करनेवालों कों भोजन करानां ११ अतिथी संविभाग वृतमें दुखिये साधर्मि श्रावक लोकांका, ७२ लक्ष द्रव्य का कर छोडनां, श्री हेमचंद्रसूरिके उत्तरनेकी धर्म शालामें जो मुखवस्त्रिकाका प्रतिलेखक साधर्मि- कों ५०० पांचसौ घोडे और बारां गामका स्वामी करा, सर्व मुख वस्त्रिकाके प्रतिलेखकांकों. ५०० पांचसो गाम दीने १२ इत्यादि अनेक प्रकारकी शुभकरणी विवेक शिरोमणि कुमारपाल राजाने करीथी. यह गुरु १ धर्म २ और कुमारपालके वृ- ताके स्वरूप उपदेश रत्नाकरसें लिखे हैं.

प्र. १६३–इस हिंदुस्थानमें जितने पंथ चल रहेहै, वे प्रथम पीछे किस क्रमसें हूएहै, जैसें आ पके जाननेमें होवे तैसें लिख दीजिये ?

उ.–प्रथम ऋषभदेवसें जैनधर्म चला१ पीछे सांख्यमत २ पीछे वैदिक कर्म कांडका ३ पीछे वे दांत मत ४ पीछे पातंजलि मत ५ पीछे नैयायि-

; मत ६ पीछे बौद्धमत ७ पीछे वैशेषिक मत ८
ोछे शैव मत ए पीछे वामीयोंका मत १० पीछे
ामानुज मत ११ पीछे मध्व १२ पीछे निंबार्क
१३ पीछे कवीर मत १४ पीछे नानक मत १५
पीछे वल्लभ मत १६ पीछे दादुमत १७ पीछे ा
मानंदीयोंका मत १८ पीछे स्वामिनारायणका
मत १ए पीछे ब्रह्म समाज मत २० पीछे आर्य
समाज मत दयानंद सरस्वतीने स्थापन करा.२१
इस कथनमें जैनमतके शास्त्र १ वेदभाष्य २ दंत
कथा ३ इतिहासके पुस्तकादिकोंका प्रमाण है।
इत्यलम् ॥ अहमदावादका वासी और पालणपु
रमें न्यायाधीश राज्याधिकारी श्रावक गिरधरला
ल हीराभाइ कृत कितनेक प्रश्न तिनके उत्तर पा
लिताणेमें चार प्रकार महा संघके समुदायने आ
चार्य पद दत्त नाम विजयानंद सूरि अपर प्रसिद्ध
नाम आत्माराम मुनि कृत समाप्त हुएहै ॥ इन
सर्व प्रश्नोत्तरोंमें जो वचन जिनागम विरूद्ध भूल
सें लिखा होवे तिसका मिथ्या दुःकृत देताहुं
सर्व सुज्ञ ज[illegible] सुधारके लिख दीजो,